चकमक

जून, 1991

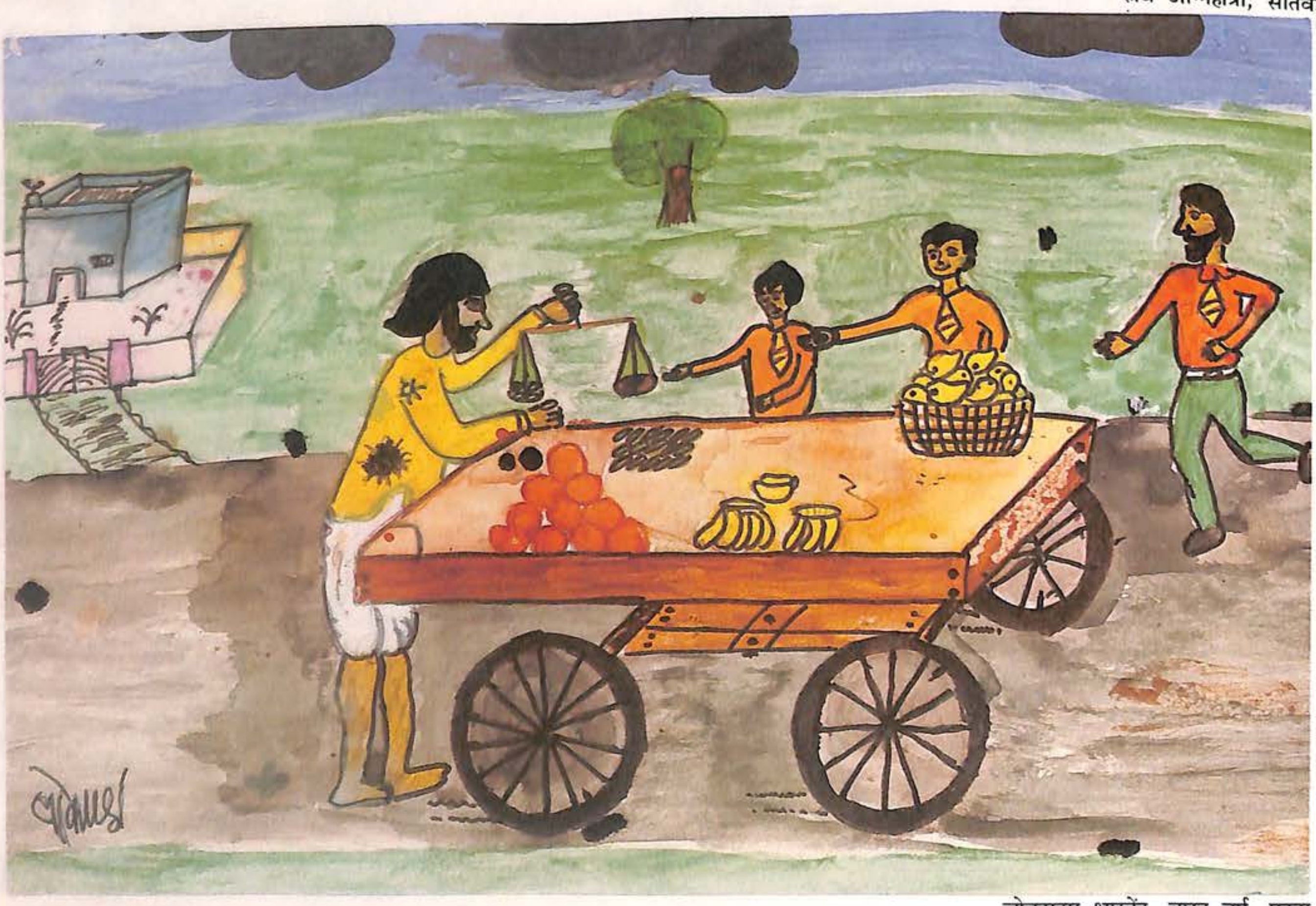
बाल विज्ञान पत्रिका

रु. 4.00





रुचि अग्निहोत्री, सातवीं



लोकपद्म भारतेंदु, बारह वर्ष, पटना



इस अंक में

विशेष

कविता

कहानी

हर बार की तरह

और यह भी

चकमक बाल विज्ञान पत्रिका
वर्ष-6 अंक-12 जून, 1991
संपादक
विनोद रायना
सह-संपादक
राजेश उत्साही
कविता सुरेश
कला
जया विवेक
उत्पादन/वितरण
हिमांशु बिस्वास, कमलसिंह

चकमक का चंदा
एक प्रति: चार रुपए
छमाही : बीस रुपए
वार्षिक : चालीस रुपए
डाक खर्च मुफ़्त
चंदा, मनीऑर्डर या बैंक ड्राफ्ट से एकलव्य के नाम पर भेजें।
कृपया चेक न भेजें।

पत्र/चंदा रचना भेजने का पता
एकलव्य,
ई-1/208, अरेरा कॉलोनी,
भोपाल-462 016 (म.प्र.)
फोन : 563380

काग़ज़ : 'यूनिसेफ' के सौजन्य से।
सहयोग : राष्ट्रीय विज्ञान व प्रौद्योगिकी संचार परिषद (विज्ञान व प्रौद्योगिकी विभाग, नई दिल्ली)

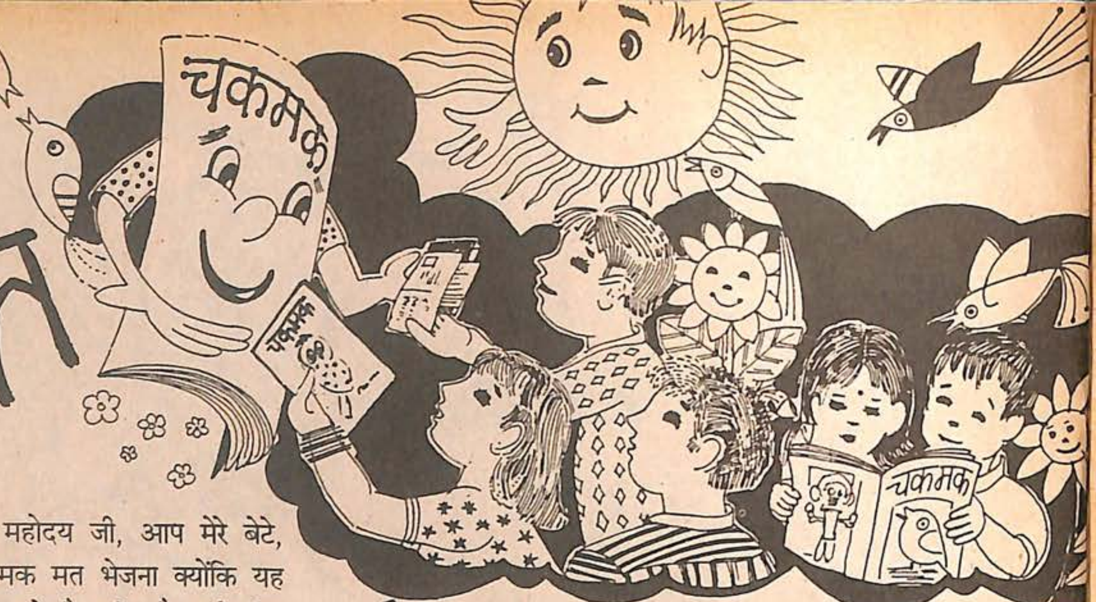
आवरण :

आस्ट्रेलिया में पाई जाने वाली एक प्रजाति की मज़दूर चींटी, चांदनी रात में नीलगिरी के पेड़ से नीचे उतरती हुई। उसने एक कीड़े को पकड़ रखा है। ठंड में जब कीड़े सुस्त पड़ जाते हैं, तब ये चींटियां फुर्ती से अपना खाना बटोरने में लगी रहती हैं।

चित्र : 'नेशनल ज्योग्राफिक' से साभार

एकलव्य एक स्वैच्छिक संस्था है जो शिक्षा, जनविज्ञान एवं अन्य क्षेत्रों में कार्यरत है। चकमक, एकलव्य द्वारा प्रकाशित अव्यवसायिक पत्रिका है। चकमक का उद्देश्य बच्चों की स्वाभाविक अभिव्यक्ति, कल्पनाशीलता, कौशल और सोच को स्थानीय परिवेश में विकसित करना है।

बातचीत



चित्र : विवेक

श्रीमान् संपादक महोदय जी, आप मेरे बेटे, गणपत को चकमक मत भेजना क्योंकि यह पढ़ने में होशियार तो है नहीं और सारे दिन खेलता रहता है। ये इसके चक्कर में एक बार फेल हो गया। यह सारे दिन भर प्रश्न पूछता रहता है। आपसे मैं आशा करता हूं कि इसे अब चकमक न भेजकर एक पत्र लिखकर कह दो कि अब पैसे भेजो और चकमक मंगवाओ। कृपया आप चकमक नहीं भेजें। मैं इसको कुछ कहता हूं तो यह हमारे सामने बोलता है। अतः आपसे अनुरोध है कि आप इसे चकमक न भेजें।

■ गेंदालाल महाजन, पालड़ी, राजस्थान

हमारी बात

जैसा कि तुम सब जानते हो राष्ट्रीय विज्ञान एवं तकनालॉजी संचार परिषद् तथा आकाशवाणी द्वारा संयुक्त रूप से आयोजित 'विज्ञान विधि' कार्यक्रम के विजेताओं को चकमक पत्रिका उपहार स्वरूप भेजी जा रही थी। राजस्थान के विजेताओं को अगस्त, 1991 तक चकमक मिलेगी। गणपत इन्हीं में से एक है। गणपत अपने पिता से ही नहीं हमसे भी पत्र लिखकर ढेरों सवाल पूछा करता है।

यह पत्र इस बात का प्रमाण है कि चकमक अपने उद्देश्य में सफल रही है। बच्चे अपनी जिज्ञासाओं को सामने लाएं; उन्हें शांत करने के माध्यम ढूंढें, प्रश्न पूछें और उत्तर खोजने का प्रयत्न करें। असली शिक्षा यही है। इन्हीं प्रक्रियाओं से गुजरते हुए उनका उचित विकास हो सकता है। पर हम यह नहीं कहते कि वे अपनी स्कूल की पढ़ाई न करें। गणपत के फेल होने के पीछे और भी कारण हो सकते हैं। चकमक या चकमक जैसी अन्य पत्रिकाएं, किताबें पढ़ना, प्रश्न पूछना या उनके उत्तर खोजना, खेलना शायद सही कारण नहीं हैं।

हम गणपत के पिता और उन जैसे तमाम लोगों से कहना चाहते हैं कि वे गणपत (या अपने बच्चों) की जिज्ञासाओं, सवाल पूछने की आदत और हिम्मत को दबाएं नहीं। हां, अगर आपके पास उनके सवालों के जवाब नहीं हैं तो अपने पास-पड़ोस, गली-मुहल्ले, गांव-शहर में ऐसे व्यक्ति, संस्थाएं ढूंढें जो उनकी मदद कर सकें। ताकि गणपत (तथा अन्य तमाम बच्चे) समाज में अपनी उचित जगह बना सकें। किसी भी घटना, कारण को वैज्ञानिक दृष्टिकोण से परख सकें।

गणपत और उस जैसे तमाम दोस्तों से हमारा कहना है कि स्कूल की पढ़ाई तो उन्हें करनी ही होगी और पास भी होना पड़ेगा। यह जानते हुए भी कि उसमें तमाम बातें ऐसी हैं जो उन्हें पसंद नहीं आतीं या बेकार लगती हैं। स्कूल में अपनी मनमर्ज़ी की पढ़ाई करना या करवा पाना तो तभी संभव होगा, जब हम शिक्षा व्यवस्था में बुनियादी परिवर्तन करें, और यह एक दिन का काम नहीं है। शायद तुम्हारी पीढ़ी ही यह काम कर दिखाए। वो दिन कभी तो आएगा... तो उस दिन के लिए इस अरुचिपूर्ण पास-फेल की व्यवस्था और अपनी सवाल पूछने, उत्तर खोजने की सुरुचि के बीच तालमेल बिठाते हुए, हर साल पास होते, जिज्ञासु बने, डटे रहो, चकमक तुम्हारे साथ है।

☐ चकमक





मन्नालाल राठौर, सातवीं, पिपल्यामंडी, मंदसौर

रजनी बोन्द्रिया, आठवीं, खंडवा

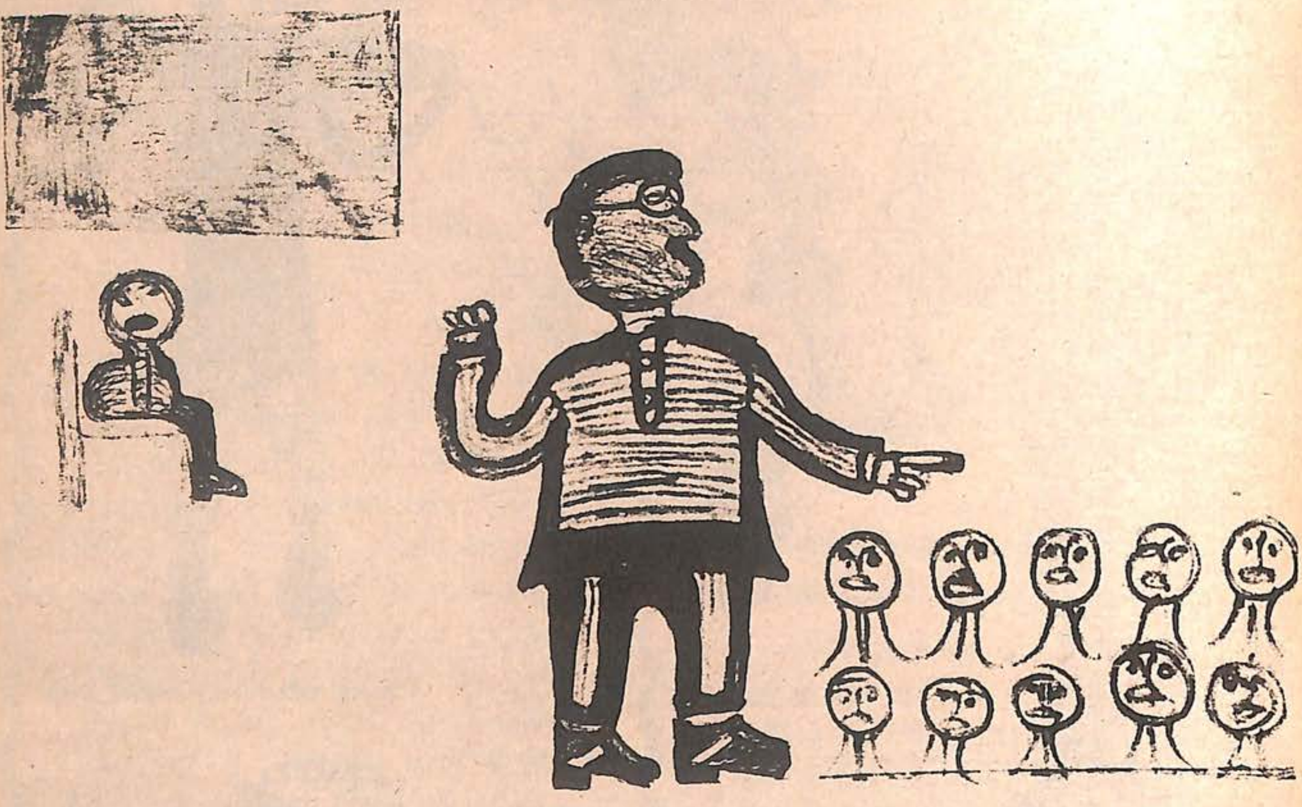


महेश बैरागी, आठवीं, रणयरा, रतलाम



नम्रता रघुवंशी, ग्यारह वर्ष, हरदा

जब मैं परीक्षा देने गया



उमेश कचेर, करकटी, शहडोल

जब मैं परीक्षा देने पहली-पहली बार गया। तब सर ने हमको पेपर बांटे। पेपर बहुत बड़ा था। हमने पेपर देखा तो वह बहुत कठिन था। पेपर हमको समझ में नहीं आ रहा था। तब हमने सर से पूछा तो सर ने हमको बहुत डांटा और कहा, 'हमको क्या मालूम। तुम कापी पढ़के नहीं आए क्या घर से?'

सर ने हमसे कहा, 'पेपर करो अपना।'

हमारी क्लास में बहुत सारे लड़के चिट लाए थे, और वह आराम से चीटिंग कर रहे थे। तभी अचानक बड़े सर कमरे में आए और उनमें से एक लड़के को पकड़ा। लड़के ने चिट फैंक दी। सर ने उस लड़के की तलाशी ली तो लड़के के पास चिट नहीं निकली।

सर वापस दूसरे कमरे में चले गए। उन लड़कों ने फिर आराम से चीटिंग शुरू कर दी। हम पेपर तो कर रहे थे तभी हमारे पास बैठा लड़का चिट से नकल कर रहा था। सर ने उसको पकड़ लिया और उस लड़के को सबसे पीछे बिठाया। अब उस लड़के को और चांस मिल गया।

वह लड़का हर पेपर में नकल करता पकड़ा जाता था फिर भी उसे सर कुछ नहीं कहते थे। एक दिन गणित के पेपर में हेडमास्टर जी ने उसे अचानक पकड़ लिया और उसे क्लास से बाहर निकाल दिया। उस लड़के ने सर से बहुत प्रार्थना की उसने कहा, 'मैं आज के बाद कभी चिट नहीं लाऊंगा।'

तब सर ने बहुत मुश्किल से उसे बिठाया।

□ चैतन्य सिंह कुशवाहा
आठवीं, आलोट पाएगा.

कुत्ता लगा पीछे

कुछ दिन पहले मैं अपने चाचा के पास पन्ना गया हुआ था। वहां पर सुबह-सुबह घूमने में मुझे बड़ा मज़ा आता था। इसलिए मैं रोज़ सुबह अपने छोटे भाई छोटू के साथ घूमने जाता था। कुछ दूर जाने के बाद ही बस्ती समाप्त हो जाती है, और हरे-भरे पेड़ व स्वच्छ हवा आ जाती है।

छोटू बहुत शैतान है। दिन भर तरह-तरह की शैतानियां करता रहता है। कभी वह मुहल्ले के छोटे लड़कों को तंग करता है तो कभी किसी जानवर को। इसलिए कोई भी उसे घूमने नहीं जाने देना चाहता था। मेरे बार-बार आग्रह करने पर सब लोग मान गए। पर साथ में यह हिदायत दी कि ज़्यादा दूर नहीं जाना है, और न ही रास्ते में कोई शैतानी करनी है।

मैंने कहा, "ठीक है अगर छोटू शैतानी करेगा तो मैं उसे रोक दूंगा।"

हम लोग घूमने चल पड़े। रास्ते में हमें एक बगीचा मिला। बगीचे में आम का पेड़ लगा था, जिस पर कुछ कच्चे आम लगे थे। छोटू बोला, "चलो आम तोड़ते हैं।"

मैंने उसे चाचा द्वारा कही गई बात याद दिलाई। हम लोग आगे चल पड़े। वापस लौटने पर फिर वही बगीचा मिला। इस बार छोटू नहीं माना। उसने कहा, "मैं तो आम तोड़ूंगा।"

मैंने भी सोचा चलो कुछ आम तोड़ते हैं। घर पर किसी को पता नहीं चलेगा। बगीचे में एक कुत्ता घूम रहा था। पहले तो मैं डरा लेकिन छोटू ने कहा, "फाटक तो अंदर से बंद है,



रूकसाना बानो, सातवीं

कुत्ता बाहर नहीं आ सकता। हम लोग बाहर से ही पत्थर मार कर आम तोड़ लेंगे। जो आम बाहर गिरेंगे उन्हें उठा लेंगे।"

हमें देखकर कुत्ता भौंकने लगा। कुत्ता बहुत तेज़ था, पर फाटक बंद होने के कारण बाहर नहीं आ सकता था, हम लोग उसे भी पत्थर मारने लगे। कुत्ता और तेज़ी से भौंकने लगा। हम को मज़ा आ रहा था। तभी अंदर से कोई आता हुआ दिखाई दिया। हम भाग कर घर आ गए। घर पर हमने किसी को कुछ नहीं बताया। दूसरे दिन फिर हम घूमने गए।

मैंने सोचा चलो आज फिर कुत्ते को तंग करेंगे। मज़ा आएगा।

हम लोग फिर बगीचे के पास जाकर कुत्ते को पत्थर मारने लगे। कुत्ता फाटक के पास आकर भौंकने लगा और फाटक पर चढ़ने की कोशिश करने लगा। तभी अचानक फाटक खुल गया। इस बार फाटक अंदर से बंद नहीं था। हम दोनों ने इस पर ध्यान नहीं दिया। कुत्ता अचानक भौंकता हुआ बाहर आ गया और हम लोगों पर झपट पड़ा। कुत्ते के नाखून लगने के कारण मेरे पैर से खून निकलने लगा। कुत्ते ने छोटू का पैर पकड़ लिया। मैंने कहा, "छोटू! जल्दी से भागो। वर्ना यह हमें काट लेगा।"

हम दोनों भागने लगे। कुत्ता हमारे पीछे-पीछे भौंकता हुआ भागता आ रहा था। हम भागते हुए अपने मुहल्ले में आ गए। हमारे मुहल्ले के कुछ कुत्ते मिलकर उससे लड़ने लगे। तब तक हम घर आ गए।

☐ दीपक कुमार खरे
महाराजपुर, छतरपुर



सुशील जोशी, दूसरी, पाली, राजस्थान

पहेली

मेरे नाम का पहला अक्षर,
चल में है, हल में नहीं।
मेरे नाम का दूसरा अक्षर,
कप में है जप में नहीं।
मेरे नाम का तीसरा अक्षर,
मत में है खत में नहीं।
मेरे नाम का चौथा अक्षर,
कमर में है अमर में नहीं।
मेरे नाम का पांचवा अक्षर,
विनीता में है सुनीता में नहीं।
मेरे नाम का छठा अक्षर,
ज्ञात में है बात में नहीं।
मेरे नाम का सातवां अक्षर,
नर में है पर में नहीं।
मेरे नाम का आठवां अक्षर,
पल में है कल में नहीं।
मेरे नाम का नवां अक्षर,
त्रिलोक में है आलोक में नहीं।
मेरे नाम का दसवां अक्षर,
कान में है शान में नहीं।
मेरे पूरे नाम में तीन शब्द हैं,
बच्चों को विज्ञान के चमत्कार
दिखाती हूं।
बताओ क्या है मेरा नाम?

☐ अनुराग गुलाटी, पांचवीं, हरिद्वार,





हरीश पाराशर, आठवीं, हाटपीपल्या

दुर्गेश, छठवीं, जोरगांव मच्छी, बैतूल



योगेश्वर प्रसाद, सातवीं, टेंगनमाड़ा, बिलासपुर

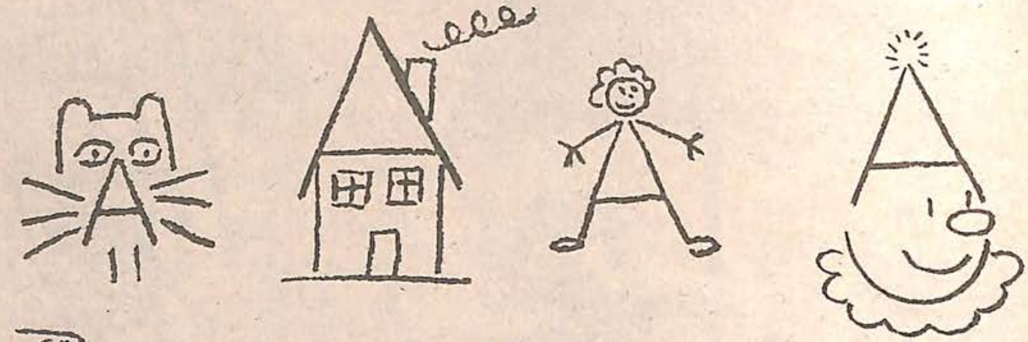


गजेन्द्र मधुसूदन, सातवीं, टिमरनी



अनुरक्ति वाघ, दस वर्ष, दिल्ली

A

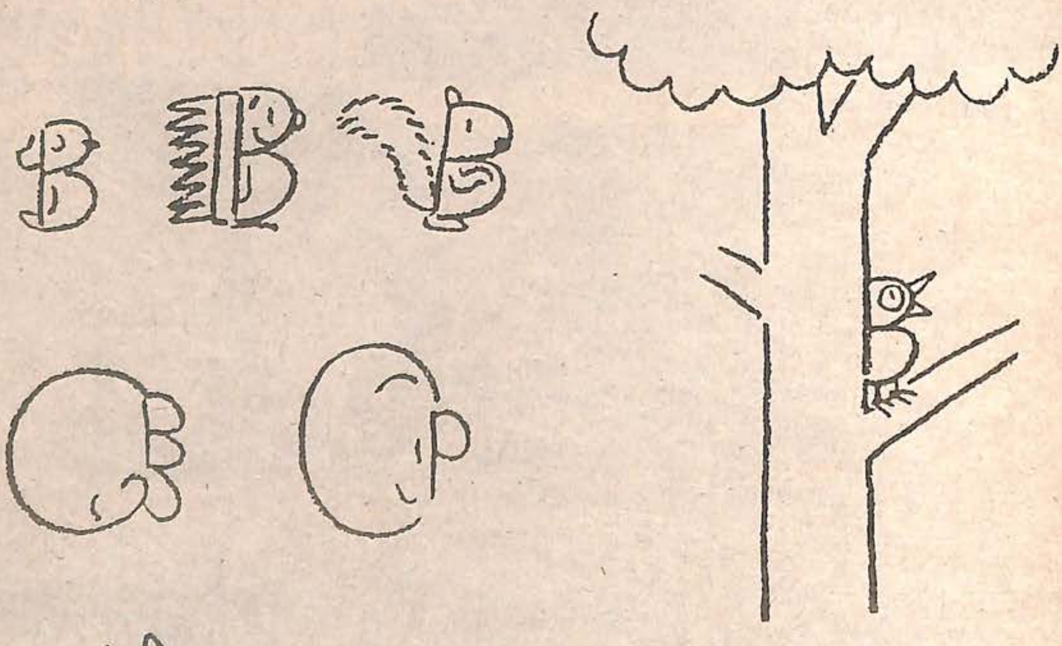


a

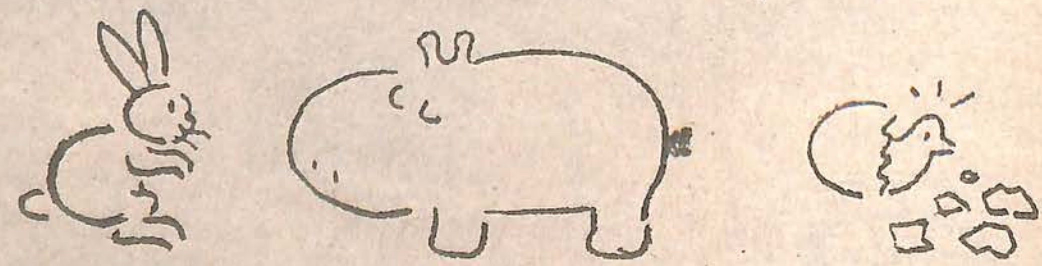


B

b



C







फ़ौजी चींटी। ये दूसरे कीड़ों को मारकर खाती हैं।

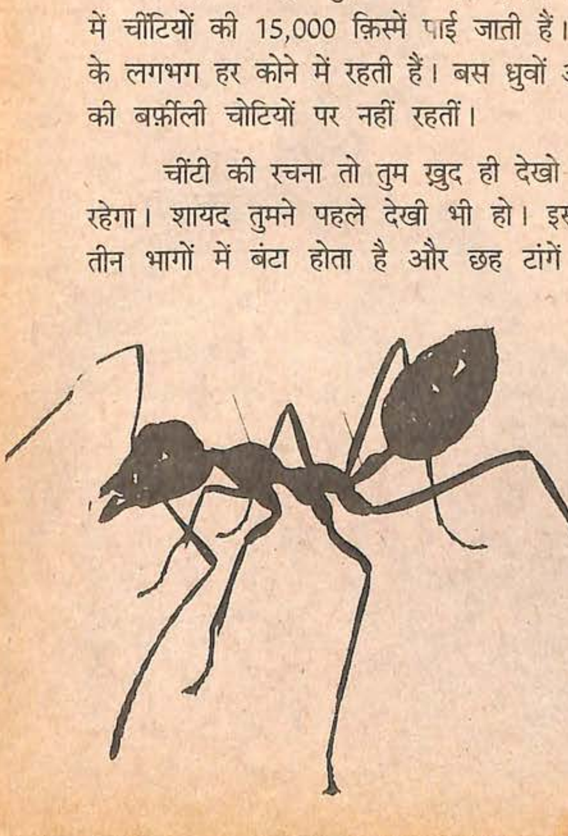
छोटी चींटियों की बड़ी दुनिया

मुझे हमेशा अचरज होता था कि शक्कर का दाना कहीं गिरते ही चींटियों की कतार कहां से चली आती है। उन्हें कैसे पता चल जाता है कि अमुक जगह पर खाने की चीज़ पड़ी है। और फिर एकाध चींटी आ जाए तो समझ में आता है, पर वहां तो कतार की कतार चली आती है। और फिर एक दिशा से आती चींटियां दूसरी तरफ से आती चींटियों से मुंह लगाकर न जाने क्या कहती हैं। आख़िर वे एक-दूसरे से क्या कहतीं हैं? उत्तर है कुछ नहीं कहतीं! मेरा मतलब है बोलतीं कुछ नहीं, पर फिर भी कुछ न कुछ इशारा तो करती ही हैं। तुम्हें भी चींटियों ने ज़रूर हैरान किया होगा। मैंने हाल ही में चींटियों के बारे में बहुत मज़ेदार बातें पढ़ी। इनसे मेरी कुछ जिज्ञासा तो शांत हुई, पर दिमाग में नई-नई बातें, नए-नए सवाल भी उठने लगे। पर इनके बारे में बाद में, पहले चींटियों की मज़ेदार दुनिया की बातें तुम भी पढ़ो।

वास्तव में चींटियों के बारे में मैंने इतना कभी नहीं सोचा था। न यह जानने की कोशिश की थी कि वे कहां रहती हैं, क्या-क्या करती हैं, क्या खाती हैं, आदि-आदि। खैर....

सबसे पहले तो यही देखें कि चींटियां होती कितने क़िस्म की हैं। मुझे पता चला है कि दुनिया भर में चींटियों की 15,000 क़िस्में पाई जाती हैं। ये दुनिया के लगभग हर कोने में रहती हैं। बस ध्रुवों और पहाड़ों की बर्फ़ीली चोटियों पर नहीं रहतीं।

चींटी की रचना तो तुम ख़ुद ही देखो तो अच्छा रहेगा। शायद तुमने पहले देखी भी हो। इसका शरीर तीन भागों में बंटा होता है और छह टांगें होती हैं। हां, अलग-अलग क़िस्म की चींटियों में थोड़े-बहुत अंतर तो होते ही हैं।



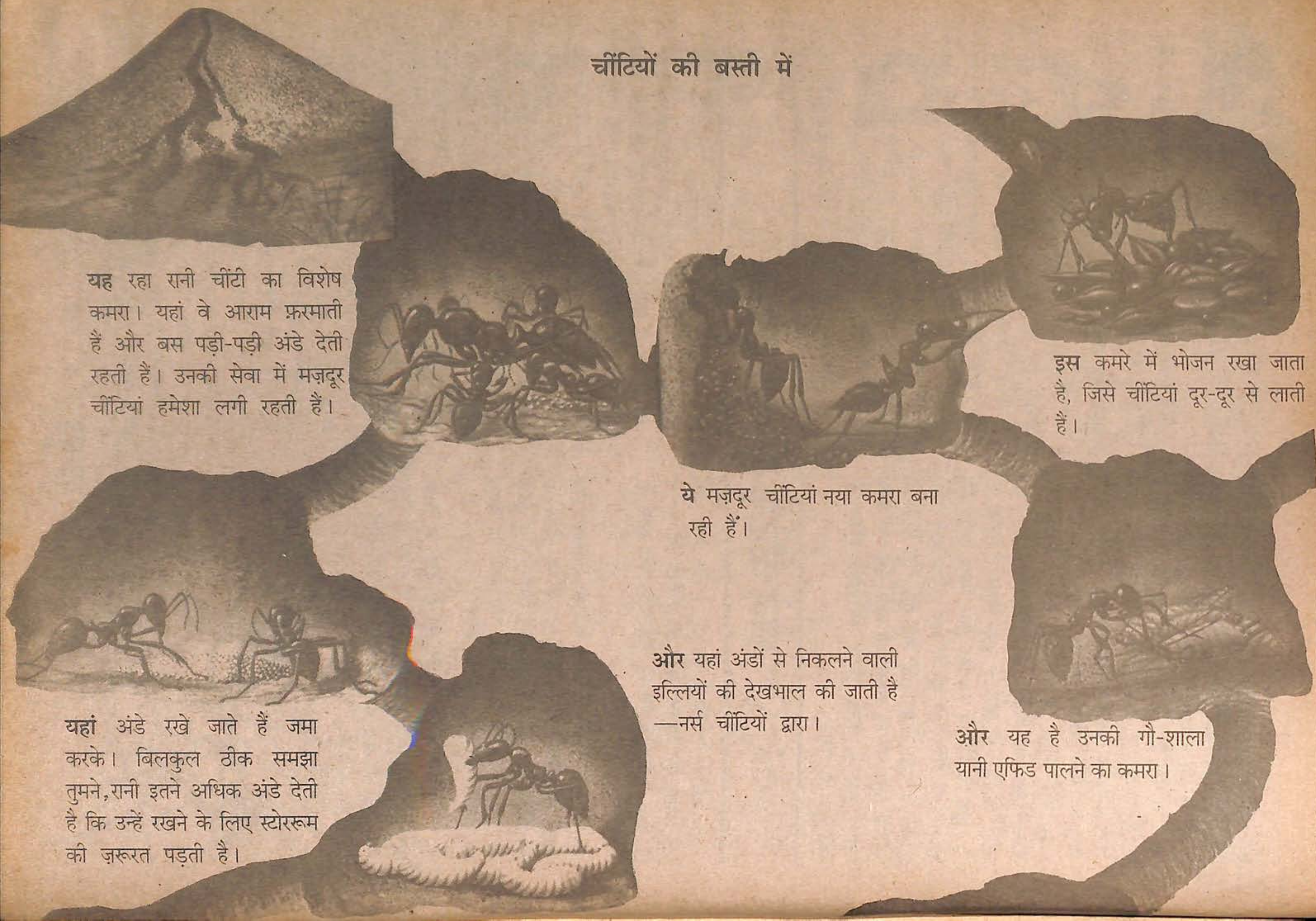
अनोखी चींटियों के अनोखे घर

चींटी के रहने की जगह बहुत रोचक होती है। चींटियां अकेली नहीं रहतीं, हमेशा झुंड बनाकर रहती हैं। झुंड में सौ से लेकर लाखों चींटियां तक हो सकती हैं। जब लाखों चींटियां एक जगह साथ-साथ रहेंगी, तो हमें उसे चींटियों का शहर ही कहना पड़ेगा। यदि तुम चींटियों का पीछा करते-करते उनके घर तक पहुंच जाओ, तो तुम्हें कई बातें देखने को मिलेंगी। घर कैसा होगा, यह तो इस पर है कि तुमने किस चींटी का पीछा किया।

जैसे एक चींटी होती है जो पेड़ पर पत्तों का घर बनाकर रहती है। घर बनाने का तरीक़ा भी बहुत मज़ेदार होता है। पहले चींटियां एक-दूसरे को पकड़कर एक श्रृंखला-सी बनाती हैं और पत्तों को पास-पास खींच लेती हैं। पत्तों को आपस में जोड़ने के लिए रेशों की ज़रूरत होती है। यह रेशा इन चींटियों की इल्लियां बनाती हैं। कुछ चींटियां इल्लियों को अधपर उठा लेती हैं और एक से दूसरे पत्ते पर लाती ले जाती हैं। साथ-साथ उन्हें विशेष तरह से गुदगुदाती रहती हैं ताकि वे रेशा बनाती रहें। इन रेशों से पत्ते आपस में जुड़ जाते हैं। बस घोंसले जैसा घर तैयार। अब इसी घर में चींटियों की रानी, मज़दूर, सिपाही, सब रहते हैं। साथ में अपना भोजन भी इकट्ठा करके रखते हैं।

चींटियों की कुछ प्रजातियां ज़मीन के नीचे घर बनाती हैं। इन घरों के अंदर कई कमरे और उनको जोड़ने वाले रास्ते होते हैं। ऐसी बस्ती बनाने के लिए उन्हें बहुत सारी मिट्टी खोद-खोदकर बाहर निकालना होती है। ऐसा अंदाज़ लगाया गया है कि ब्राजील में पाई जाने वाली एक क़िस्म की चींटियां एक साल में एक एकड़ ज़मीन में सोलह टन मिट्टी खोद डालती हैं। एक टन में एक हज़ार किलोग्राम होते हैं। इसी प्रकार अफ़्रीका में पाई जाने वाली एक चींटी साल भर

चींटियों की बस्ती में



यह रहा रानी चींटी का विशेष कमरा। यहां वे आराम फ़रमाती हैं और बस पड़ी-पड़ी अंडे देती रहती हैं। उनकी सेवा में मज़दूर चींटियां हमेशा लगी रहती हैं।

ये मज़दूर चींटियां नया कमरा बना रही हैं।

इस कमरे में भोजन रखा जाता है, जिसे चींटियां दूर-दूर से लाती हैं।

यहां अंडे रखे जाते हैं जमा करके। बिलकुल ठीक समझा तुमने, रानी इतने अधिक अंडे देती है कि उन्हें रखने के लिए स्टोररूम की ज़रूरत पड़ती है।

और यहां अंडों से निकलने वाली इल्लियों की देखभाल की जाती है —नर्स चींटियों द्वारा।

और यह है उनकी गौ-शाला यानी एफिड पालने का कमरा।



पत्तों से बना घर।

में एक एकड़ ज़मीन में एक हज़ार टन मिट्टी उलट-पुलट सकती है। इस मिट्टी से ज़मीन के ऊपर एक टीला-सा बन जाता है और अंदर बढ़िया कमरे और रास्ते बन जाते हैं। ज़मीन में बने ये घरोंदे बहुमंज़िला होते हैं। जाड़े में चींटियां ऊपरी मंज़िल में रहती हैं और गर्मियों में निचली मंज़िल में। और भी कई तरह के घर, बस्तियां, महानगर ये चींटियां बनाती हैं।

चींटी का परिवार

यदि इनके घर में कभी मेहमान बनो, तो एक और मज़ेदार चीज़ दिखेगी। ऊपर भी तुमने पढ़ा होगा कि चींटी के घर में रानी, मज़दूर, सिपाही वगैरह रहते हैं। यानी एक ही जाति की सारी चींटियां एक जैसी नहीं होतीं। उनमें अंतर होते हैं।

जैसे कि हरेक घर या बस्ती में एक रानी होती है। रानी को पहचानना बहुत आसान है। उस बस्ती में यही सबसे बड़ी चींटी होती है और एक ही जगह चुपचाप पड़ी रहती है। बस इसका एक ही काम होता है—अंडे देते रहना। इन अंडों को उठाकर अलग



बढ़ई चींटी। यह सड़ी हुई और बेकार पड़ी लकड़ियों के ढेर में अपने घर बनाती है।

करना, उनकी देखभाल करना, इल्लियां निकलने पर उन्हें भोजन कराना वगैरह काम मज़दूर चींटियां करती हैं। ये चींटियां काफ़ी छोटी होती हैं, जैसी कि तुम अक़्सर देखते हो। इनके अन्य काम होते हैं—भोजन लाना, भोजन इकट्ठा करके रखना, घर बनाना, मरम्मत करना आदि। चींटियों की कुछ प्रजातियां ऐसी होती हैं जो खेती भी करती हैं और कुछ पशुपालन का काम भी करती हैं। पर उनके बारे में ज़रा बाद में।

चींटियों की कुछ जातियां ऐसी हैं, जिनमें बस्ती की रक्षा करने के लिए सिपाही चींटियां भी होती हैं। इनके शरीर की बनावट भी थोड़े अलग ढंग की होती



काली चींटियों का सिपाही।

है। इनके मुंह में चबाने, चीरने-फाड़ने वाले अंग ज़्यादा विकसित होते हैं। जब कभी किसी दूसरी बस्ती की चींटी द्वारा इन पर हमला किया जाता है तो ये सिपाही चींटियां ही रक्षा का काम करती हैं।

खानाबदोश चींटी

लो, चींटियों के खानदान के बारे में बताते-बताते मैं यह भूल ही गया कि एक प्रजाति ऐसी भी है जो खानाबदोश है यानि एक जगह नहीं टिकती, घूमती-फिरती रहती है। इन्हें फ़ौजी चींटी कहा जाता है। इनके काफ़िले में चींटियों की संख्या दो करोड़ तक हो सकती है। सफ़र के दौरान बीच में ये कुछ दिनों के लिए पड़ाव डालती हैं। ऐसी स्थिति में ये अपने-आपको एक जंज़ीर के रूप में जोड़कर घर-सा बना लेती हैं। कुछ दिन रुककर फिर चल पड़ती हैं। इनका रुकने-चलने का क्रम निश्चित रहता है। क्रम यह है कि 17 दिन तक



चींटियों की बहुत-सी प्रजातियां भोजन के लिए अनाज एकत्र करके रखती हैं। ऐसी ही एक चींटी।

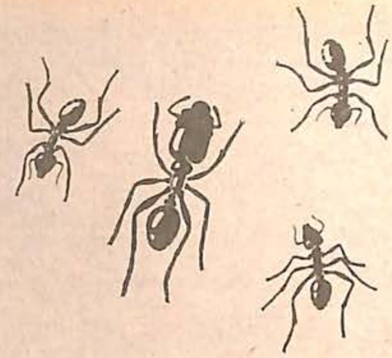
ये चलती हैं और फिर ठहर जाती हैं। एक जगह पर 19 या 20 दिन ठहरकर फिर चल पड़ती हैं।

तुम सोच रहे होगे कि आख़िर इन चींटियों को कैसे मालूम पड़ता है कि कब रुकना है या कब चलना है? और एक-दो नहीं, करोड़-दो करोड़ चींटियों को एक साथ याद आता है कि उन्हें अब रुक जाना है या चल पड़ना है। पहले वैज्ञानिकों का ख़्याल था कि यह उनके भोजन से जुड़ी हुई बात है। जब तक एक जगह भोजन मिलता है तब तक ये एक जगह रुकी रहती हैं और भोजन ख़त्म हो जाता है, तो चल पड़ती हैं। परंतु बाद में पता चला कि ऐसा नहीं है। वैसे भी भोजन होने न होने का क्रम 17 दिन का ही हो, यह तो ज़रूरी नहीं। जब इन चींटियों को ध्यान से देखा गया, तो पता चला कि रुकने-चलने का क्रम वास्तव में इनके प्रजनन से जुड़ा है।

जब अंडों में से इल्लियां निकलती हैं तो उनके शरीर में से कुछ रसायन निकलते हैं, जो पूरी फ़ौज के पास संपर्क के माध्यम से पहुंच जाते हैं। इस रसायन का पहुंचना ही चलने का संकेत माना जाता है। इन इल्लियों को उठाकर क़ाफ़िला चल पड़ता है। इल्लियों से शंखी बनने की अवधि 17 दिन की होती है। जब शंखी बन जाती है तो रसायन निकलना बंद हो जाता है। इसलिए अब क़ाफ़िला ठहर जाता है और शंखियों में से नई चींटियां निकलने तक रुका रहता है। इसी दौरान रानी नए अंडे दे देती है और 10-20 दिन बाद इनमें से इल्लियां निकल आती हैं और एक बार फिर फौज़ कूच कर देती है।

चींटियों का भोजन....

चींटियों के भोजन की बात करें। क्या है उनका भोजन? शक्कर के दाने उठाकर ले जाते हुए तो हमने देखा ही है। जहां कहीं थोड़ी-सी भी मिठाई पड़ी रह जाए कि चींटियां आईं। ये छोटे-मोटे जीव-जन्तुओं को भी चट कर जाती हैं। इन्हें ढोकर अपने घर भी ले जाती हैं। ऐसा देखा गया है कि एक चींटी अपने वज़न से पचास गुना ज़्यादा बोझा ढो सकती है। सोचो यदि तुम्हारा वज़न 20 किलो हो, तो क्या तुम 1000 किलो वज़न ढो सकोगे? खैर....





अपने से बड़े आकार के कीट का शिकार करतीं, तीन छोटी चींटियां। वे उसके मुंह से बचते हुए, पिछले हिस्से पर हमला करती हैं और टांगें तोड़कर उसे ख़त्म कर दती हैं।

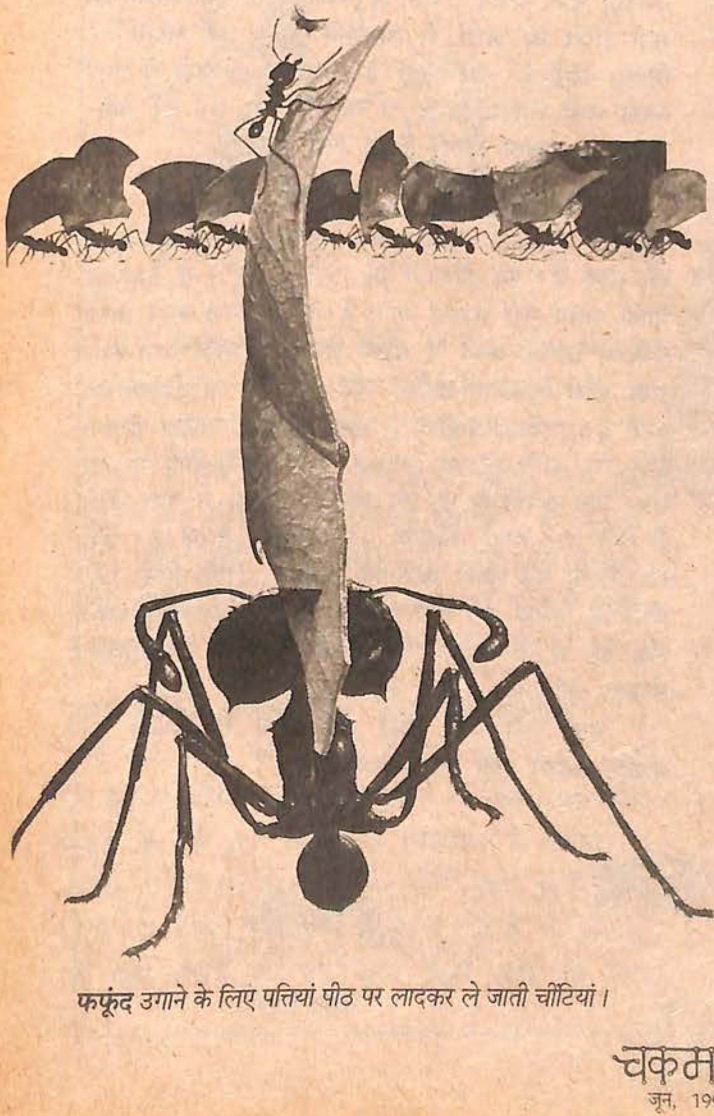
जब किसी चींटी को पता चलता है कि अमुक जगह पर खाने की चीज़ रखी है, तो वह तुरंत अपने घर की ओर चल पड़ती है। रास्ते भर वह बीच-बीच में अपना पेट ज़मीन से छुआकर चलती है। वास्तव में ऐसा करने पर उसके शरीर से निकलने वाले कुछ रसायन जमीन पर चिपक जाते हैं। घर पहुंचकर वह रासायनिक भाषा में दूसरी चींटियों को बताती है कि भोजन है। यह भी बताती है कि कितना भोजन है और कितनी दूरी पर है। जैसे हम मोहल्ले भर में बता देते हैं कि आज राशन की दुकान पर मिट्टी का तेल आया है, और खबर फैलते ही लोग डिब्बे, बोतल लेकर निकल पड़ते हैं। ठीक ऐसे ही कई सारी चींटियां निकल पड़ती हैं और कुछ ही समय में सारी खाद्य सामग्री घर पहुंच जाती है।

यह तो हुआ कि कहीं पड़ा मिल गया तो उठा लाए। इस तरीके से चींटियां अनाज के दाने आदि भी जमा करती हैं। परंतु यह जानकर आश्चर्य होता है कि चींटियां खेती भी करती हैं।

करें खेती, पालें कीड़े चींटियां

ऐसी कई चींटियां हैं, जो खेती करती हैं। पर वे अनाज नहीं, कुकुरमुत्ते (एक तरह की फंफूदी) उगाती हैं। इस चींटी के बारे में सबसे पहले 1829 में पूना में एक अंग्रेज़ फ़ौजी अफ़सर ने पता लगाया था। आज ऐसी सौ प्रजातियों के बारे में जानकारी उपलब्ध है जो खेती करती हैं।

ये चींटियां पत्तियां काटकर ले आती हैं। पत्ती काटने के लिए इनके विशेष अंग होते हैं। पत्तियां लेने जाते समय ये अपने साथ अपनी कुछ इल्लियों को भी ले जाती हैं। वापसी में ये इल्लियां पत्तियों पर बैठी रहती हैं और पत्तियां चींटियों की पीठ पर। इल्लियां इस बात का ध्यान रखती हैं कि पत्तियों पर किसी और



फफूंद उगाने के लिए पत्तियां पीठ पर लादकर ले जाती चींटियां।

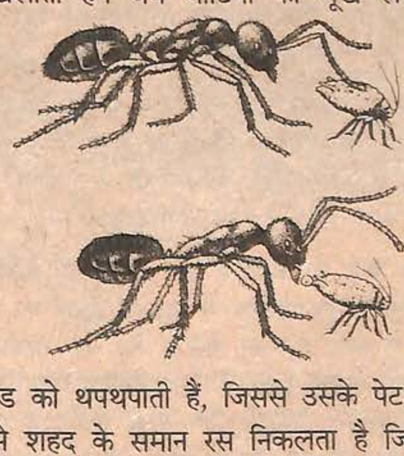


पशुपालक चींटी, जो एफिड पालती हैं।

तरह की फंफूदी न लग जाए या कोई और कीड़ा उन पर अपने अंडे न दे दे। इन पत्तियों को पीस लिया जाता है। पीसी हुई पत्तियों को ज़मीन पर फैला दिया जाता है। इस पर कुकुरमुत्ते उगते हैं, जिन्हें चींटियां चाव से खाती हैं।

चींटियों की लार में कुछ ऐसे पदार्थ होते हैं कि वे एक ही क़िस्म के कुकुरमुत्ते को पनपने देते हैं। अन्य क़िस्म के कुकुरमुत्ते खरपतवार की तरह मर जाते हैं। कुकुरमुत्ते भी मज़ेदार होते हैं वे किसी ख़ास क़िस्म की चींटी पर इतने निर्भर होते हैं कि कहीं और उगते ही नहीं। तुम पूछोगे कि चींटियों को कुकुरमुत्ते के बीज कहां से मिलते हैं। भई इस बारे में यह पता चला है कि हर रानी चींटी नई बस्ती बनाते समय कुछ कुकुरमुत्ते के बीज अपने साथ लाती है। है न मज़ेदार खेती!

अगर कुकुरमुत्तों से तुम्हारा पेट न भरा हो, तो और सुनो। चींटियों की कुछ प्रजातियां ऐसी भी हैं जो पशु पालती हैं। पर इनका पशु एफिड नाम का एक कीड़ा होता है। जिसे ये अपने घर में क़ैद कर लेती हैं। क़ैद किए कीड़ों को पत्तियों, टहनियों आदि का चारा खिलाती हैं। जब चींटियों को भूख लगती है तो



वे एफिड को थपथपाती हैं, जिससे उसके पेट के पिछले हिस्से से शहद के समान रस निकलता है जिसे चींटियां चटकर जाती हैं। एफिड बहुत नाज़ुक जीव होते हैं। चींटियां उन्हें सुरक्षा देती हैं और वे बदले में भोजन।

चींटी अक़्लमंद है या... !

भोजन की बात करते-करते मुझे भी भूख लगने लगी है। तो बस, थोड़ी और बातें बताकर चींटी पुराण ख़त्म करते हैं। चींटियों के बारे में कहा जाता है वे सामाजिक प्राणी हैं। वे बहुत अक़्लमंदी से काम करती हैं। घर



***फफूंद** की खेती करने वाली चींटी।*

बनाती हैं, भोजन इकट्ठा करती हैं, खेती करती हैं, एफिड पालती हैं, दुश्मनों से अपनी बस्ती की रक्षा करती हैं, बच्चे पालती हैं आदि आदि। ये सब काम क्या बिना किसी योजना के हो सकते हैं। इसीलिए चींटियों को बुद्धिमान भी कहा गया। बुद्धिमान का मतलब यह है कि हिल-मिलकर तालमेल बनाकर काम करना, जटिल रचना बनाना और परिस्थिति देखकर फैसला करना।

पर क्या वास्तव में ऐसा होता है। जैसे जब चींटियां पत्तियां लाना शुरू करती हैं, तो क्या वे जानती हैं कि इस पत्ती का क्या करेंगी? हम मानते हैं कि किसान जब खेत जोतते हैं तो उन्हें फ़सल कटने तक के कामों का पूरा अंदाज़ रहता है। सारे काम की सिलसिलेवार योजना दिमाग में रहती है। क्या चींटियों को भी पूरा सिलसिला मालूम होता है पहले से? मतलब यह कि चींटियां जो भी करती हैं क्या उसका उद्देश्य उन्हें पता होता है? वैज्ञानिकों ने इस संबंध में कुछ नई बातों का पता लगाया है।

आजकल वैज्ञानिक कहते हैं कि शायद चींटियां सोच-समझकर काम नहीं करतीं। उन्हें तो बस एक संकेत मिलता है—अधिकतर यह संकेत रासायनिक होता

कैसे पैदा होती हैं चींटियां?

जब हम रानी, मज़दूर, सिपाही कहते हैं तो दिमाग़ में इंसान आ जाते हैं। परंतु इंसानों में जो सिपाही, मज़दूर या रानियां (जिनके बारे में अब सिर्फ़ किस्से-कहानी में पढ़ने को मिलता है) होती हैं, उन सबके शरीर तो आम इंसानों जैसे ही होते हैं। जो अंतर होता है वो उनके रहन-सहन, वेशभूषा आदि में होता है। पर जब हम चींटियों का ज़िक्र करते हैं तो थोड़ी अलग बात होती है। अलग-अलग काम करने वाली चींटियां कुदरती रूप से भिन्न होती हैं। उनकी शरीर रचना में अंतर होता है। पर मज़े की बात यह है कि अलग-अलग शारीरिक रचनाओं वाली ये चींटियां एक ही तरह के अंडे से पैदा होती हैं। कैसे? आओ देखते हैं।

आमतौर पर चींटियों की बस्ती में एक ही रानी होती है। साधारण परिस्थिति में किसी भी बस्ती में सारी चींटियां मादा होती हैं। नर-चींटी कभी-कभी पैदा होती हैं। रानी चींटी का काम होता है अंडे देते रहना।

रानी कई नर चींटियों के संपर्क में आकर अपने शरीर में स्थित शुक्राणुकोष में शुक्राणु जमा कर लेती है। इस कोष में इतने शुक्राणु होते हैं कि वह आजीवन अंडों को निषेचित करती रहती है। नर चींटियां रानी के शरीर में शुक्राणु छोड़ने के बाद मर जाती हैं। अब यदि अंडा निषेचित हो जाए तो उससे मादा चींटी बनती है और निषेचित न हो, तो नर चींटी। आमतौर पर रानी लगातार निषेचित अंडे ही देती है, अनिषेचित अंडे तभी दिए जाते हैं जब नर की ज़रूरत हो।

रानी द्वारा दिए गए अंडों को उठाकर अलग रख दिया जाता है। जब इनमें से इल्ली निकलती है तो मज़दूर चींटियां उसे भोजन कराती हैं। भोजन के साथ-साथ उसे रानी चींटी के शरीर से निकलने वाला एक पदार्थ भी चटाया जाता है। इस पदार्थ के असर से इल्लियों से बनने वाली सारी चींटियां बांझ रह जाती हैं—वे अंडे नहीं देतीं। वे या तो मज़दूर बनतीं हैं या फिर सिपाही।

जब बस्ती में ज़रूरत होती है कि एक नई रानी पैदा की जाए तो कुछ इल्लियों की देखभाल विशेष प्रकार से की जाती है। इन इल्लियों को रानी के शरीर से निकलने वाला पदार्थ नहीं चटाता जाता है। इससे इनसे बनने वाली चींटियां प्रजनन करने में सक्षम होती हैं। इसके साथ-साथ रानी चींटी कुछ अनिषेचित अंडे भी देती हैं, जिनसे नर बनते हैं। इनके पंख निकल आते हैं। फिर नवजात रानियां और नर बस्ती छोड़कर उड़ जाते हैं। रानी चींटी नर के साथ मेल करती है, नर मर जाता है। शुरू में रानी चींटी ही पैदा होने वाली चींटियों की देखभाल करती है। जैसे ही चींटियों की पहली खेप पैदा होती है, (प्रति मिनट एक चींटी के हिसाब से) वैसे ही रानी सारा कामकाज छोड़कर अंडे देने में लग जाती है। बाकी काम ये नई चींटियां संभाल लेती हैं।

एक रानी पंद्रह साल तक जिंदा रह सकती है। मज़दूर अक्सर सात-आठ साल जीते हैं।



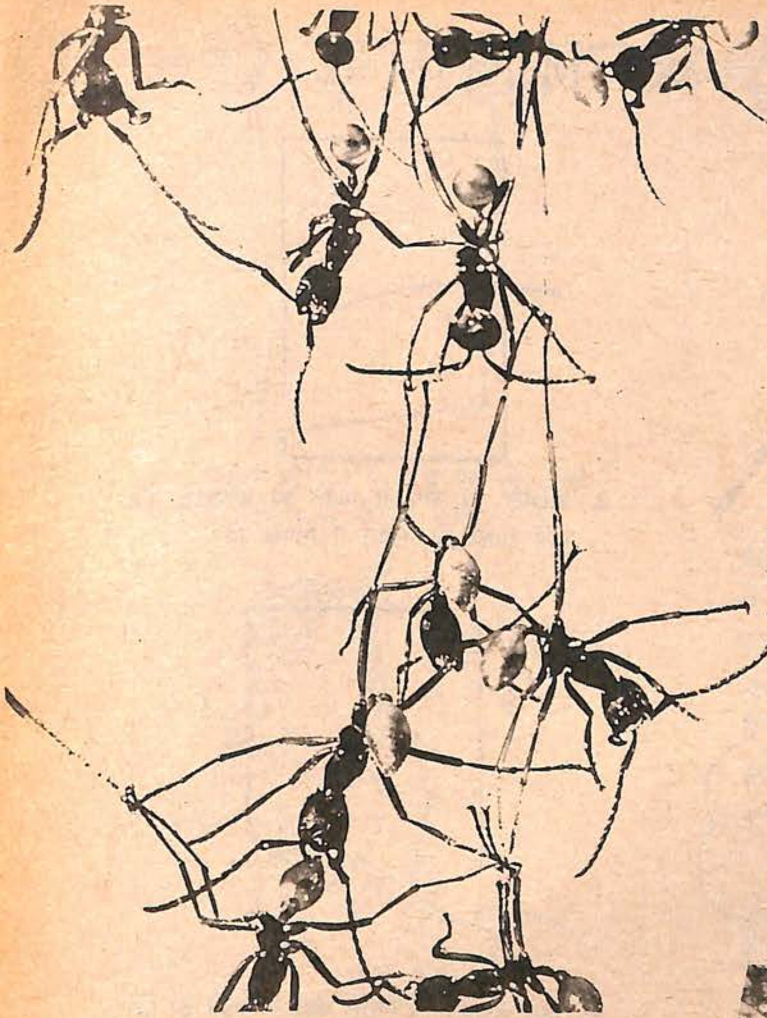
नर चींटी



रानी चींटी



मज़दूर चींटी



काली *चींटियों का काफ़िला। वे एक-दूसरे से मिलकर एक बड़ा जाल-सा बनाती हैं।*

है। इस संकेत का उनके शरीर में एक क्रिया विशेष से संबंध रहता है। तो, यह विशेष संकेत मिलते ही वे उस काम में जुट जाती हैं। उन्हें इस काम के परिणाम से कुछ लेना-देना नहीं होता। दूसरी बात कुछ वैज्ञानिक यह मानते हैं कि चींटियां परिस्थिति के अनुसार निर्णय नहीं करतीं। वे तो बस अपने संकेत के अनुसार चलती जाती हैं। वैज्ञानिकों ने इस संबंध में कई प्रयोग भी किए हैं, पर उनके बारे में अभी कुछ नहीं बताएंगे।

रासायनिक संकेत की दीवानी चींटियां

जैसा तुमने पढ़ा, ऐसा लगता है कि बस्ती में एक रानी के होने से लेकर अन्य सभी कामों के पीछे रासायनिक संकेत का ही हाथ है। कुल मिलाकर ये रासायनिक संकेत दो प्रकार के होते हैं—एक स्वाद वाले और दूसरे गंध वाले। गंध वाले संकेत वे होते हैं जो चींटियों की बड़ी संख्या को एक साथ किसी काम के लिए

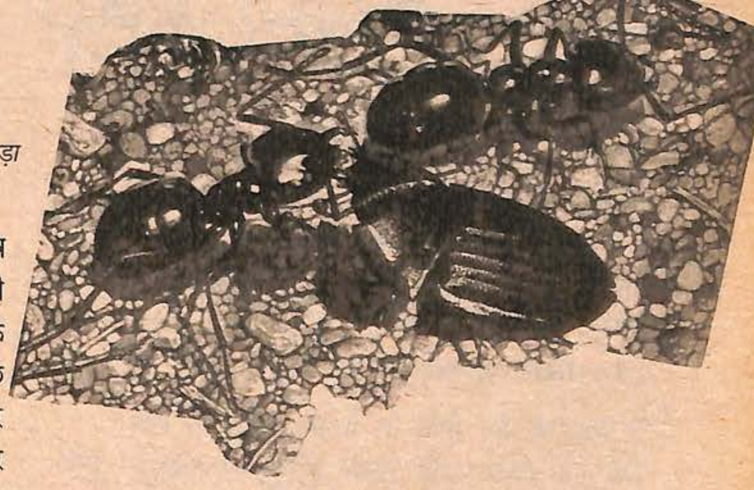
दूसरी *चींटियों के लार्वा, मज़दूर, नर्स, आदि को मारकर खाने वाली चींटी।*



तत्पर कर देते हैं। स्वाद वाले पदार्थ स्पर्श के माध्यम से एक-दूसरे तक पहुंचते हैं।

जब एक चींटी दूसरी चींटी से 'ज़बान' लड़ाती है, तो वास्तव में वे आपस में एक रासायनिक मिश्रण का आदान-प्रदान करती हैं। इस मिश्रण के रासायनिक पदार्थ तुरंत शरीर पर असर करते हैं और चींटी को बताते हैं कि उसे क्या करना है। मज़ेदार बात यह है कि चींटियां इन रासायनिक संकेतों को अनसुना, अनदेखा नहीं कर सकतीं, एक कान से सुनकर दूसरे कान से नहीं निकाल सकतीं। वे इनके अनुसार काम करने को मजबूर होती हैं।

बस एक आख़िरी बात। इन रासायनिक संकेतों का बड़ा फ़ायदा है। एकदम तालमेल से काम चलता है। पर कई बार कुछ ठग भी इसका फ़ायदा उठा लेते हैं। एक क़िस्म के झींगुर महाशय ने चींटी का भोजन



मांगने का संकेत पहचान लिया है। देखने में यह झींगुर दूर-दूर तक चींटी जैसा नहीं दिखता। पर जब चींटियां खाना लेकर घर जा रही होती हैं तो ये झींगुर महाशय रास्ते में खड़े होकर भोजन मांगने का रासायनिक संकेत पैदा करते हैं और चींटियां इन्हें भोजन करा देती हैं। है न ठगी का मामला! तो बस! अब कुछ और जानना हो तो तुम भी चींटियों के रासायनिक संकेत समझकर सीधे उनसे ही बात कर लो।

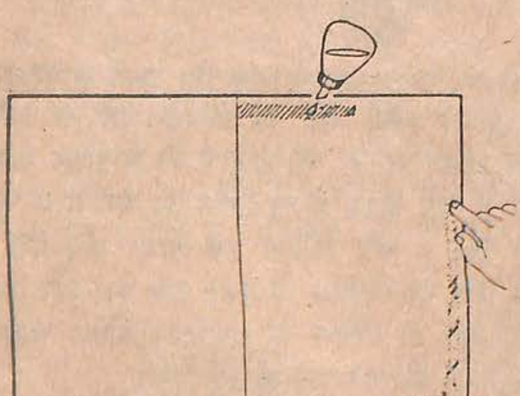
□ **सुशील जोशी**

खेल कागज़ का

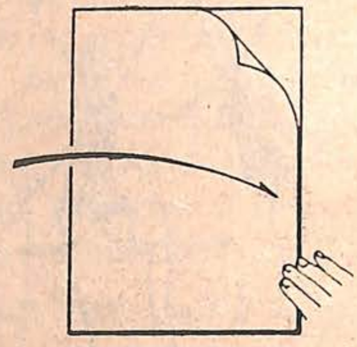
इस बार एक ऐसी तरक़ीब सीखो, जिससे तुम अपने दोस्तों को दांतों तले उंगली दबाने पर मजबूर कर सकते हो। बोलचाल की भाषा में इसे काग़ज़ का जादू कह सकते हो।



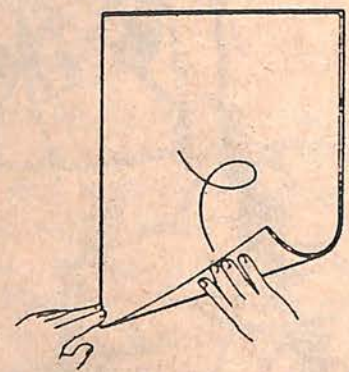
1. अख़बार का एक पन्ना लो।



2. चित्र में दिखाई जगहों पर गोंद लगाओ।



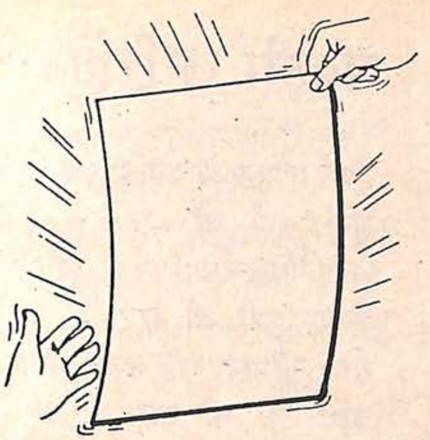
3. अख़बार को बीच से मोड़ते हुए पलटाओ और दोनों सतहों को आपस में चिपका दो।



4. अब अख़बार को निचले कोने से मोड़ते हुए कोन बनाओ।



5. अब इसमें एक छोटा रूमाल, रिबन या ऐसी ही अन्य कोई चीज़ डालो। बाहर से या सामने से देखने पर तो ऐसा लगेगा कि तुम उसे कोन में डाल रहे हो। पर वास्तव में उसे अख़बार की उन दो परतों के बीच डालो, जो चिपकाते समय खुली छोड़ दी थीं।



6. अब अख़बार को फिर से सीधा कर लो। यानी उसमें जो चीज़ डाली थी वह गायब!



7. अब फिर से लपेटकर कोन बनाओ और सतहों के बीच छिपे रूमाल को निकालकर (इस तरह, जैसे कोन से ही निकाल रहे हो।) अपने दोस्तों को आश्चर्य चकित कर दो।



दुनिया पक्षियों की -26



पत्रिंगा

गौरैया के आकार का हरे रंग का यह पक्षी छोटे तोते के समान दिखाई पड़ता है। ध्यान से देखने पर इसकी लंबी और मुड़ी हुई चोंच और पूंछ से निकले दो लंबे परों से पता चलता है कि यह तोता नहीं है। पत्रिंगा के सिर और गले पर कत्थई रंग होता है। गले में काली कंठी भी होती है। नर और मादा एक जैसे नज़र आते हैं।

पत्रिंगा शहर, गांव और जंगल सभी जगह पाए जाते हैं। फिर भी इन्हें खुली जगह अधिक पसंद होती है। छोटे-छोटे झुंडों में ये बिजली या टेलीफोन के तारों पर बैठे रहते हैं। यहां से ही ये कीड़ों पर नज़र रखते हैं। जैसे ही कोई कीड़ा नज़र आता है ये उसे हवा में ही पकड़ लेते हैं। फिर वापस अपने स्थान पर बैठकर शिकार को खाने से पहले पटक-पटककर मार डालते हैं। पत्रिंगा उड़ने में बहुत कुशल होता है। कीड़े पकड़ते समय इसके हवाई करतब देखते ही बनते हैं। इसकी ट्रिल-ट्रिल आवाज़ कानों को बहुत मधुर लगती है।

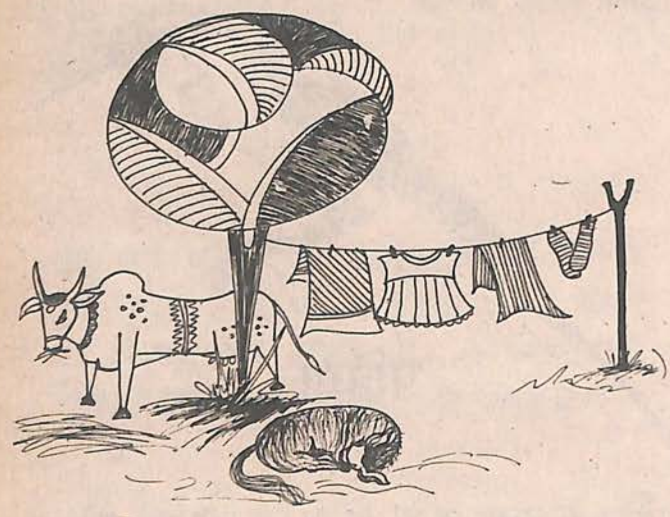
*वैसे तो पत्रिंगा किसी भी कीड़े को खा लेता है किंतु मधुमक्खियां इसका सबसे प्रिय भोजन हैं। इसी कारण इसे अंग्रेजी में **'बी-ईटर'** यानी **'मधुमक्खी खाने वाला'** कहते हैं।*

पत्रिंगे का प्रजनन काल फरवरी से मई तक होता है। इसका घोंसला मिट्टी में एक सुरंग के रूप में होता है, जिसके अंत में एक छोटा-सा कमरा होता है। इस कमरे में मादा 4 से 7 तक अंडे देती है। नर और मादा दोनों मिलकर बच्चों के लिए भोजन जुटाते हैं।

☐ **अरविंद गुप्ते**

(चित्र सौजन्य : बॉम्बे नेचुरल हिस्ट्री सोसायटी, बम्बई)

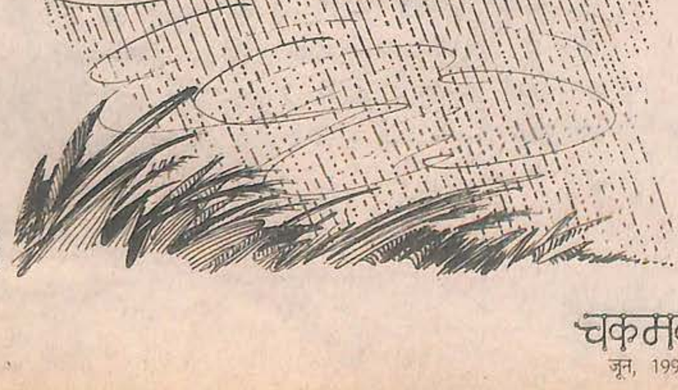
पहली बारिश



रस्सी पर लटके कपड़ों को
सुखा रही थी धूप
चाची पिछले आंगन में जा
फटक रही थी सूप।
गैया पीपल की छैंया में
चबा रही थी घास
झबरू कुत्ता आंखें मूंदे
लेटा उसके पास।

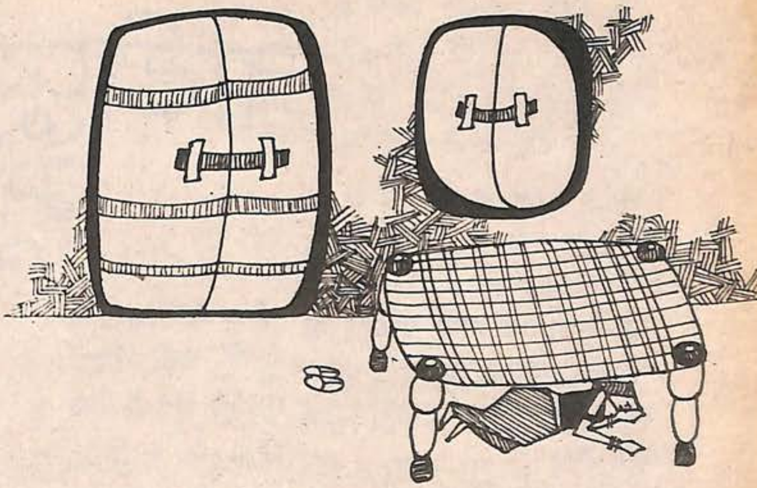
राज मिस्त्री जी हौदी पर
पोत रहे थे गारा
उसके बाद उन्हें करना था
छज्जा ठीक हमारा।
अम्मां दीदी को संग लेकर
गईं थीं राशन लेनें
आते में खुतरू मोची से
जूते भी थे लेने।
तभी अचानक आसमान पर
काले बादल आए
भीगी हवा के झोंके अपने
पीछे-पीछे लाए।

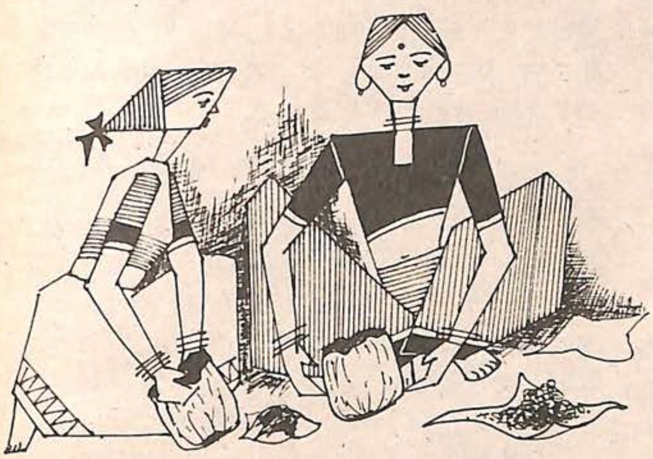




सब से पहले शुरू हुई कुछ
टिप-टिप बूंदा-बांदी
फिर आई घनघोर गरज़ती
बारिश के संग आंधी।
मंगलू धोबी बाहर लपका
चाची भागी अंदर
गाय उठकर खड़ी हो गई
झबरू दौड़ा भीतर।

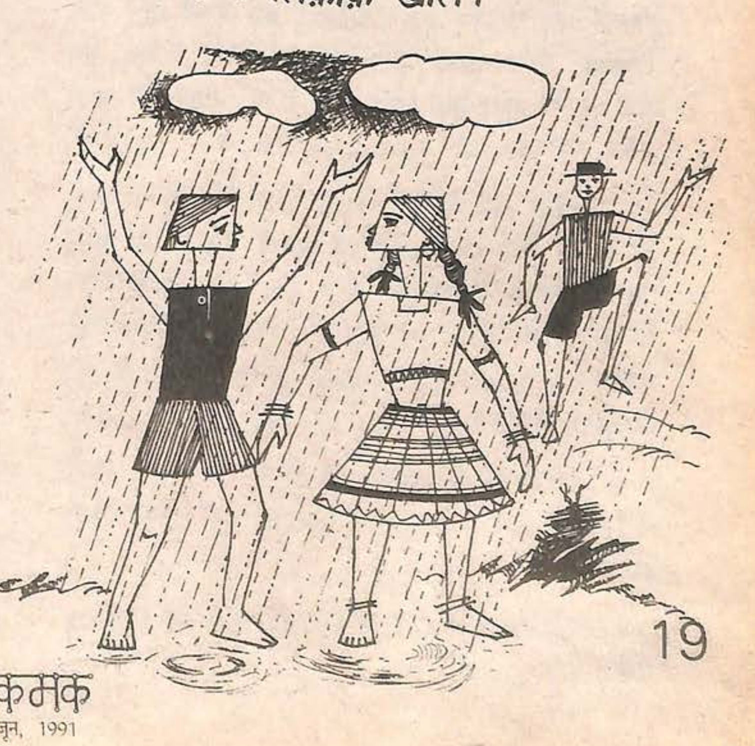
राज मिस्त्री ने गारे पर
ढंक दी फ़ौरन टाट
और हौदी पर औंधी कर दी
टूटी-फूटी खाट।
हो गए चोड़म-चोड़ा सारे
धूप में सूखे कपड़े
इधर-उधर उड़ते-फिरते थे
मंगलू कैसे पकड़े।





चाची ने खिड़की दरवाज़े
बंद कर दिए सारे
पलंग के नीचे जा लेटी
बिजली के डर के मारे।
झबरू ऊंचे सुर में भौंका
गाय लगी रंभाने
हौदी बेचारी कीचड़ में
हो गई दाने-दाने।
अम्मां दीदी आईं दौड़ती
सर पर रखे झोले
और जल्दी-जल्दी
राशन के फिर
सभी लिफ़ाफ़े खोले।

सबने बारिश को कोसा
आंखें भी खूब दिखाईं
पर हम नाचे बारिश में
और मौज़ें ढेर मनाईं।
मैदानों में भागे दौड़े।
मारी बहुत छलांगें
तब ही वापस घर आए
जब थक गईं दोनों टांगें।



☐ सफ़दर हाशमी
(सहमत के सौजन्य से)
सभी चित्र : रूबीना

चींटीपुरम् के भूरेलाल

चींटीपुरम् की रानी दंतवती की फ़ौज में सिपाही थे भूरेलाल। उनका रंग थोड़ा भूरा था जबकि बाकी चींटियों का रंग काला था। इसीलिए उन्हें भूरेलाल नाम दे दिया गया था।

भूरेलाल करते कुछ नहीं थे, बोलते बहुत थे। उनकी इसी आदत पर उन्हें फ़ौज से निकाल दिया गया था। बारिश का मौसम शुरू होने वाला था। सारे राज की चींटियों को हुक्म मिला था कि वे काफ़ी तादाद में भोजन अपने किले में इकट्ठा कर लें। चींटियों का एक दस्ता शिकार की तलाश में जाने वाला था।

भूरेलाल ने सुना तो वे भी उसमें शामिल हो गए।

चींटीपुरम् का किला एक आम के पेड़ की जड़ में बना हुआ था। जड़ के पास एक नन्हे सूराख़ से होकर वे लोग बाहर आए। बाहर निकलकर भूरेलाल ने मूछें घुमाकर आसपास देखा। इसी जगह परसों लाल चींटियों के एक गश्ती दल ने उन्हें पकड़ लिया था। पकड़कर उन्होंने उनकी कुटाई भी की थी। वो तो कहो पड़ोस के तालाब के दो मेंढक फुदकते हुए आ निकले। मेंढकों को देखकर लाल चींटियों का गश्ती दल भाग निकला, वरना चाचा ने तो अपने बाप-दादों का नाम याद करना शुरू कर दिया था। लाल चींटियों ने ऊपर आम की डाल पर पड़ाव डाल रखा था।

लाल चींटियों का स्वभाव बहुत ज़ालिम था और किसी भी इक्का-दुक्का चींटी को पकड़ कर उससे अपने घर का काम करवाने में उन्हें बड़ा मज़ा आता था। वो तो कहो चाचा उस दिन उन खिलंदड़े मेंढकों की वजह से बच गए, वरना आज लाल चींटियों के डेरे में बर्तन मांज रहे होते।'

बाहर आकर चाचा ने आसपास देखा। लाल सेना कहीं नज़र नहीं आई। भूरेलाल खुश होकर आगे चल पड़े।

अब समस्या यह थी कि शिकार किस चीज़ का किया जाए। टिड्डे या झींगुर के शिकार में मज़ा तो आता है, लेकिन मुश्किल उनकी लात की होती है। टिड्डे और झींगुर गधों की तरह दुलत्ती झाड़ देते हैं। और उनसे सख़्त चोट आती है। मकड़ी से तो बचकर ही रहना ठीक होता है। वह कम्बख़्त अजीब चिपकने वाली रस्सी लेकर चलती है।

सब से मज़ेदार शिकार होता है इल्लियों का। वैसे तो इल्लियां भी कम बदतमीज़ नहीं होती हैं। अपने ऊपर हमला करने वाले पर कभी-कभी इस तरह थूकती हैं कि हमला करने वाले को घिन छूट जाए। मगर फिर भी उनके पिलपिले रंगीन शरीर पर कूद-कूदकर हमला करने में खेल का-सा मज़ा आता है।



सामने घास का भयंकर जंगल पार करके फूलों के जो छोटे-छोटे पौधे लगे थे, उन पर काफ़ी इल्लियां थीं। शिकारी दल ने एक सुझाव रखा, "क्यों न हम में से कोई किसी इल्ली का छोड़ा हुआ कवच पहन ले। उसके पीछे-पीछे बाकी चींटियां भी छिपकर इल्ली तक पहुंच सकती हैं।"

सुझाव सभी को पसंद आया। भूरेलाल आगे बढ़कर बोले, "मेरा शिकार करने का अनुभव सबसे ज़्यादा है। इल्ली की खाल ओढ़कर मैं आगे-आगे चलूंगा।"

दरअसल भूरेलाल ने सोचा—अगर सामने वाली इल्ली ने थूका भी, तो वे साफ़ बच जाएंगे। लिहाज़ा एक इल्ली की खाल ढूंढ़कर उन्होंने ओढ़ी और दल के आगे-आगे चल दिए।

सामने स्वीट पी (मटर की बेल) की हवा में लहराती मुलायम-मुलायम लतरें छोटी-छोटी छड़ियों के सहारे खड़ी थीं। लतर की एक शाख पर दो रंगबिरंगी इल्लियां मज़े में पत्तियां चर रहीं थीं।

शिकारी दल अब सावधानी से आगे बढ़ा। मगर यह क्या? यह हेलिकॉप्टर जैसी आवाज़ कहां से आ रही है? शिकारी दल थोड़ी देर के लिए उलझन में पड़ गया। तभी दल के एक आदमी ने कहा, "वो देखो, ऊपर—आसमान पर!"

लोगों ने ऊपर देखा तो चौंक पड़े। एक बहुत बड़ी बर्र उनके ऊपर मंडराती हुई उन्हें घूर रही थी।

ये लोग ताज्जुब में पड़ गए, बर्र तो उन्हें खाती नहीं है। बर्र को चींटियों का मांस बहुत रद्दी लगता है। एक बार बर्रों की बस्ती में एक बर्र ने चींटियों के मीट की दूकान खोल ली थी। बर्रों ने उसे मारकर बस्ती से बाहर खदेड़ दिया था। लेकिन फिर इस बर्र का इरादा क्या हो सकता था?

उड़ते-उड़ते वह बर्र और निकट आ रही थी। डर के मारे दो-तीन चींटियां नीचे ज़मीन पर आ गिरीं।

शोर-शराबा सुनकर भूरेलाल ने इल्ली की खाल के नीचे से थोड़ा-सा सिर निकालकर बाहर देखा। उनकी तो जान ही ख़ुश्क हो गई। वह मोटी भयंकर बर्र उनसे सिर्फ़ एक इंच के फ़ासले पर उड़ती हुई उन्हें अपनी डरावनी आंखों से घूर रही थी।

बर्र बहुत देर से परेशान थी। वह अंडे देने वाली थी। जल्दी से जल्दी उसे किसी न किसी 'होम' की तलाश थी। बर्र का नर्सिंग होम इल्लियां होती हैं। किसी इल्ली के ऊपर बैठकर बर्र अपनी पूंछ से खोदकर अपने अंडे इल्ली की नरम-नरम गद्दियों में रख जाती है।

बर्र ने देखा, एक इल्ली तेज़ी से स्वीट पी पर चढ़ रही है और कई चींटियां उसके पीछे दौड़ रही हैं। बस वह दो मिनट उड़ती रही और फिर अचानक इल्ली के ऊपर आ बैठी।

"अरे, मर गए!" भूरेलाल इल्ली की खाल के अंदर से चिल्लाए। दरअसल जिसे बर्र ने इल्ली समझा, वह इल्ली की खाल ओढ़े भूरेलाल थे।

भूरेलाल के साथी दो क्षण ठिठके, फिर पीछे की ओर भागे।



भूरेलाल चिल्लाए, "हाय! मर गए! अरे, ओ बर्र देवी! मैं इल्ली नहीं, भूरेलाल हूं! मुझे छोड़ दो और अपना नर्सिंग होम कलियां चरती हुई उस सचमुच की इल्ली को बनाओ।"

मगर बर्र कहां सुनने वाली थी। उसने अपनी लंबी-लंबी टांगों से भूरेलाल को जकड़ लिया। भूरेलाल घबराहट में छटपटाने लगे। उन्होंने देखा कि बर्र की नुकीली पूंछ उनकी ओर झुक रही है। वे बेतहाशा चिल्लाए।

भगदड़ में भी शिकारी दल की चींटियों को भूरेलाल की मजबूरी पर हंसी आ गई। एक चींटा हंसते-हंसते बोला, "कुछ भी कहो, जो कुछ होने वाला है वह है मज़ेदार!"

"हां, यह बात तो है।" उसके साथी ने भी भागते-भागते पीछे मुड़कर भूरेलाल को छटपटाते देखकर

कहा, "वह बर्र बहुत ख़तरनाक है। भूरेलाल चाहे जितना छटपटाए, वह अपने अंडे उसकी पीठ पर चिपका देगी। थोड़े दिन में उन अंडों से बर्रें निकलेंगी। कितना मज़ा आएगा! भूरेलाल बर्र के बच्चों को दूध पिला रहा होगा, लोरी गा रहा होगा और.... और.... उनके पोतड़े धो रहा होगा!"

भूरेलाल की हालत देखने लायक थी। अच्छे-ख़ासे आदमी को बर्र जबर्दस्ती अम्मा बनाए दे रही थी।

भूरेलाल ने जब आंखें खोली, तो उन्हें अपनी कमर के पास दर्द महसूस हुआ। बर्र का अब कहीं पता नहीं था। इल्ली की खाल अभी उनकी कमर से लिपटी हुई थी। उन्होंने अपनी गोल-मटोल खोपड़ी घुमाकर जो अपने बदन की तरफ देखा, तो उन्हें रोना आ गया।

बर्र अपने ढेर-से अंडे इल्ली के धोखे में उनके पेट में भरकर जा चुकी थी। उनका पेट बोरी की तरह फूलकर लटक आया था। उनके सारे साथी गायब हो चुके थे। उनसे ठीक तरह से चला भी नहीं जा रहा





था। लुढ़कते-पुढ़कते वे घर की ओर चले, तो उन्हें फिर याद आ गया कि अब उन्हें कई दिन घर पर रहना पड़ेगा। फिर जब बच्चे होंगे, तो उन्हें उनके पोतड़े धोने पड़ेंगे। अपनी मजबूरी पर वे रोते जा रहे थे। और घर की ओर गिरते-पड़ते चले जा रहे थे। मन ही मन वे क़समें भी खा रहे थे कि न तो अब वे कभी शिकार खेलेंगे और न शिकार की डींग हांकेंगे।

अचानक उन्होंने किसी के ठहाकों की आवाज़ सुनी, तो उन्हें होश आया। देखा वे चींटीपुरम् में थे और बहुत-सी चींटियों ने उन्हें घेर रखा था। बीच में रानी साहिबा भी थीं। हंसी उन्हें ही आ रही थी।

"हाहाहा ..... होहोहो..... हीहीही!" रानी दंतवती अपने मोटे शरीर को हिलाती हुई हंसे जा रही थी।

भूरेलाल ने गुस्से से होंठ काटे—तो शिकारी दल के लोगों ने उनके साथ जो कुछ हुआ, उसकी खबर पहले से ही यहां पहुंचा दी!

लोगों को मज़ाक का मसाला मिल गया। एक बोला, "भूरेलाल जी, पोतड़े धोने के लिए साबुन खरीदोगे

या धोबी घाट जाओगे?''

दूसरा बोला, अरे भई, बच्चों के फ्रॉक सिलना सीख लो!''

तीसरा कहता, ''भूरेलाल जी, बच्चों को शुश्शू कैसे कराते हैं, पता है?''

अपनी दुर्दशा पर रोने के अलावा और वे अब कर भी क्या सकते थे?

आखिर थोड़े दिनों बाद भूरेलाल कई एक बच्चों के पिता बने—नहीं, मां बने। बर्र-बालक बहुत शरारती थे। सारे दिन भूरेलाल को झींकना पड़ता। अब समस्या थी कि इतने सारे बच्चों के लिए दूध कहां से आए। ग्वाला अक़्सर दूध में पानी मिला लाता था। वैसे पानी से भी इतना कष्ट उन्हें न होता, बशर्ते कि वह नल का पानी मिलाता। मगर ग्वाला इतना मक्कार था कि जिस घर में दूध देता था उसी घर की नाली से उतना ही कीचड़-पानी दूध में मिला लेता था।

भूरेलाल ने सोचा, एक गाय ले आई जाए। चींटियों के समाज में गायें पालने का बड़ा रिवाज रहा है। बस ज़रा उनकी गउओं की शक्ल थोड़ी अलग होती है। लोग उनको हरी मक्खियां कहते हैं। चींटियां इन्हें बड़े चाव से पालती हैं और इन्हें दुहकर अपना काम चलाती हैं।

भूरेलाल गाय लाने निकले। बहुत देख-सुनकर उन्होंने मोटी-सी गाय खरीदी। गाय लेकर बड़े ठाठ से वे घर की ओर चले।

भूरेलाल को लोगों ने गाय लाते देखा तो, शरारत सूझी। रानी दंतवती का बॉडीगार्ड मालिश कर रहा था। हाथ रोककर उसने भूरेलाल को आवाज़ दी, ''नमस्कार, भूरेलाल जी! क्या गाय लाए हैं?''

मन में कुढ़कर भी भूरेलाल को बोलना पड़ा, ''हां भाई, बच्चों के लिए ज़रूरी थी।''

''अच्छा किया। गाय तो वैसे अच्छी है, मगर एक गड़बड़ है।'' बॉडीगार्ड बोला।

''क्या? गड़बड़ क्या है जी?'' भूरेलाल ने चिढ़कर पूछा।

''नाराज़ मत हो, भाई। मगर इसकी पूंछ ज़रा टेढ़ी है।''

''क्या? पूंछ टेढ़ी है?'' भूरेलाल भड़क गए।

''टेढ़ी तो है ही। ध्यान से देखो।'' एक बढ़ई चींटी पीढ़े पर रंदा फेरती हुई बोली।

''कहां? किधर से टेढ़ी है?'' भूरेलाल ने पूछा।

''ध्यान से देखो।'' बॉडीगार्ड ने कहा।

भूरेलाल गाय की पूंछ देखने लगे। पूंछ टेढ़ी है या नहीं, यह देख पाना काफ़ी मुश्किल काम था। गाय लगातार पूंछ हिला रही थी, इसलिए कुछ पता ही नहीं लग रहा था।

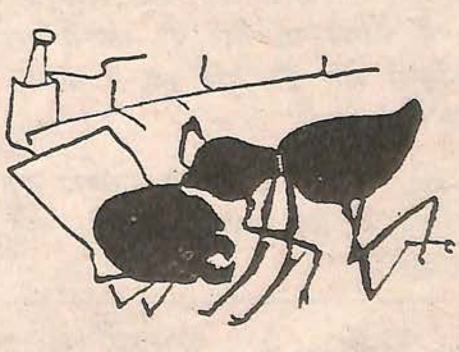
गाय लगातार पूंछ हिला रही थी। ऐसे में भला उसका टेढ़ापन कैसे दिखता। इसीलिए उन्होंने आव देखा न ताव, गाय की हिलती हुई पूंछ पकड़ ली।

''कहां टेढ़ी है जी?'' भूरेलाल चिल्लाए। पूंछ पकड़ने से गाय को गुस्सा आ गया। किसी भी जानवर को पूंछ पकड़ने पर गुस्सा आता ही है। गाय ने फुंकार मारकर पूंछ छुड़ाने की कोशिश की, लेकिन भूरेलाल ने पूंछ और ज़ोर से पकड़ ली।

गाय को ज़्यादा गुस्सा आ गया। उसने अपनी पूंछ मरोड़ी।

''यह देखो। ध्यान से देखो पूंछ टेढ़ी है!''

''कहां टेढ़ी है जी?'' कहकर भूरेलाल ने गाय की पूंछ खींचकर सीधी करनी चाही। गाय और ज़्यादा चिढ़ गई। चिढ़कर उसने अपनी दोनों टांगें उठाईं और भूरेलाल के थोबड़े पर दे मारी। भूरेलाल कलाबाज़ियां



खाते हुए नाली में जा गिरे। गाय भागती हुई एक तरफ चली गई।

□ मुद्राराक्षस

(लेखक के सौजन्य से उनके बाल उपन्यास 'चींटीपुरम् के भूरेलाल' का एक हिस्सा)

क्यों... क्यों... 9

मुनिया की मां ने मुनिया से कहा, "जा तो बशीरन चाची के यहां से गेहूं चालने की बड़ी चलनी ले आ। और देख बादल उठ रहे हैं, जल्दी से ले आ। कहीं पानी बरसने लगा तो भींज जाएगी।"

"पानी बरसेगा तो बड़ा मज़ा आएगा! मैं तो ज़रूर भींजूंगी।" मुनिया खुशी से फूली नहीं समाई!

"न, न ऐसा मत करियो।"

"क्यों मां!" मुनिया के खुशी से थिरकते पांव एकदम रुक गए।

"फिर शुरू हो गई तेरी क्यों-क्यों! ***अरे पहली बारिश के पानी से फोड़े-फुंसियां हो जाते हैं।*** अब तू जा भी!" मां ने जैसे पीछा छुड़ाया।

मुनिया कुछ सोचती हुई चली गई। बशीरन चाची से उसने चलनी ली और अपने सिर पर रख ली। बशीरन चाची एकदम चिल्लाई, "अरे बिटिया सिर पर न रख इसे। ***चलनी सिर पर रखने से फोड़े हो जाते हैं सिर में।"***

मुनिया चाची से तो कुछ न बोली। थोड़ी दूर चलकर उसके चलनी सिर पर रख ली, और बोली, 'देखती हूं फोड़े होते हैं या नहीं?' आसमान की तरफ मुंह करके बादलों से बोली, 'तुम भी बरसो, इस बार हम भी पहली बारिश में भींजकर देखेंगे।'

तुम्हारा क्या ख्याल है? ***क्या सचमुच पहली बारिश में भीगने या सिर पर चलनी रखने से फोड़े-फुंसियां होते हैं? तुम्हें हुए हैं कभी? क्यों कहा जाता है ऐसा***?

अपने उत्तर हमें ***15 अगस्त, 1991 तक भेज दो***। लिफ़ाफ़े, पोस्टकार्ड आदि पर ***क्यों... क्यों... 9*** ज़रूर लिखना।

क्यों... क्यों... 4 : पाठकों के उत्तर

दिसंबर, 1990 के अंक में प्रकाशित सवाल तो तुम्हें याद ही होगा। चलो दोहराए देते हैं।

मुनिया की काकी जब अपनी बिटिया को दूध पिला रही थीं, तो वह बार-बार उगल रही थी। पर जब मुनिया की मां ने बिटिया की नज़र उतारी और उसे कंधे से लगाने को कहा, तो ऐसा करने से बिटिया ने दूध उगलना बंद कर दिया और वह सो गई। पर क्या वास्तव में ऐसा नज़र उतारने के कारण हुआ था..... या बात कुछ और थी?

> ध्यान रहे, यह ज़रूरी नहीं है कि हर पुरानी प्रथा, परंपरा या रीतिरिवाज़ दकियानूसी ही हो, उसके पीछे कोई तार्किक आधार भी हो सकता है। आधार एक या एक से अधिक भी हो सकते हैं। पर यह भी आवश्यक नहीं है कि हर परंपरा या प्रथा के पीछे आधार होगा ही!

हमें दो तरह के उत्तर मिले हैं।

पहला, यह कि बिटिया को ***नज़र लग गई थी***। इसी कारण वह दूध उगल रही थी। नज़र से बीमार पड़ने और कभी-कभी व्यक्ति की मुत्यु होने की बात भी कुछ उत्तरों में लिखी है। मुनिया की मां ने नज़र उतारकर ही बिटिया को ठीक किया था। ऐसे पत्रों की संख्या ***14*** है।

दूसरा, यह कि नज़र से कुछ नहीं होता। बिटिया दूध इसलिए उगल रही थी, ***क्योंकि उसके पेट में दूध के साथ-साथ कुछ हवा भी चली गई थी***। हवा के कारण ही बिटिया दूध डाल रही थी। इस तरह के जवाब वाले ***22*** पत्र हैं। एक-दो पत्रों में दूध का गरम होना या ऐसा ही अन्य कारण बताया गया है।

जहां तक पहले उत्तर की बात है तो जैसा कि हमने क्यों... क्यों... 3 के संदर्भ में (मई, 1991) लिखा था, नज़र लगना एक टोटके की तरह है। कुछ इसे मानते हैं, कुछ नहीं। ***विज्ञान इसे नहीं मानता***। नज़र से कुछ होता है या नहीं, यह तो तुम खुद ही करके देख सकते हो।

दूसरा उत्तर ही ठीक है। आमतौर पर शिशु जब दूध उगलते हैं तो उसके पीछे यही कारण होता है। दूध पीते समय कुछ हवा भी मुंह के द्वारा शिशु के पेट में चली जाती है। ऐसे में अगर शिशु को लिटा दिया जाता है तो पेट आदि दबने से हवा के साथ-साथ दूध भी बाहर आ जाता है। इसीलिए शिशु को दूध पिलाने के बाद कंधे से लगाकर उसकी पीठ थपथपाने के लिए कहा जाता है। ऐसा करने से शिशु को डकार

(शेष पृष्ठ 27 पर)

पिछले अंक में हमने हवा के कुछ प्रयोग किए थे। आओ कुछ और प्रयोग करते हैं।

प्रयोग-1

एक ग्लूकोज़ बोतल में पानी भर लो और उसके मुंह में कसकर बैठ जाने वाला एक छेदी-रबर कार्क लो। रबर कार्क के छेद में कांच की एक नली पिरो दो। ध्यान रहे कि नली और कार्क के छेद के बीच हवा निकलने की जगह न रहे। अब ग्लूकोज़ बोतल में इतना पानी भरो कि कार्क लगाने पर नली का निचला हिस्सा पानी में अच्छी तरह डूबा रहे (चित्र-1)। कार्क से ग्लूकोज़ बोतल का मुंह अच्छी तरह बंद कर दो। अब नली द्वारा बोतल के अंदर ज़ोर से फूंक मारकर जल्दी से मुंह हटा लो।

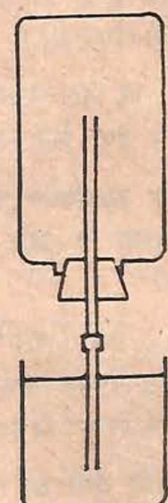
देखो क्या होता है और क्यों?


चित्र-1

प्रयोग-2

पिछले प्रयोग की बोतल से सारा पानी निकालकर कार्क फिर से फिटकर दो। कांच की नली के बाहरी सिरे पर रबर की एक नली चढ़ा लो। अब रबर नली द्वारा मुंह से सांस ऊपर की ओर खींचकर नली को पानी से भरी बाल्टी में डुबोकर उसका मुंह खोल दो (चित्र-2)।

क्या हुआ और क्यों?


चित्र-2

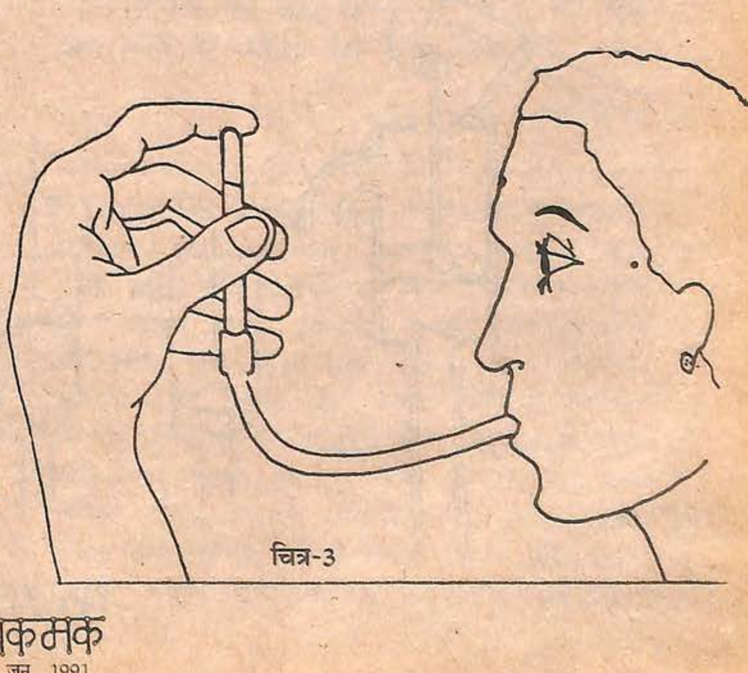
प्रयोग-3

कांच की नली लो और उसके एक सिरे पर रबर की नली लगा लो। नली में इतना पानी भरो कि कांच की नली के लगभग आधे भाग में पानी आ जाए। कांच की नली के मुंह पर उंगली रखकर उसे बंद कर लो और रबर की नली द्वारा मुंह से फूंक मारो (चित्र-3)।

देखो। फूंक मारने पर कांच की नली में पानी का तल बदलता है या नहीं?

फूंक मारते समय क्या तुम उंगली पर कुछ दबाव महसूस करते हो?

इस प्रयोग में फूंक मारते समय उंगली हटा लेने पर क्या होगा? करके देखो!


चित्र-3

सोचो। ड्रापर के मुंह को स्याही में डुबोकर ऊपर से दबाकर छोड़ने पर ड्रापर में स्याही क्यों भर जाती है?

प्रयोग-4

एक पोस्टकार्ड के बीच में गोल छेद करो और दूसरी तरफ एक काग़ज़ को एक सिरे से चिपका दो (चित्र-4)। अब एक तरफ से छेद में फूंक मारो। काग़ज़ का पल्ला खुल जाएगा और मुंह से फूंकी हवा निकल जाएगी। दूसरी ओर से फूंक मारोगे तो पल्ला बंद हो जाएगा और हवा पार नहीं जा सकेगी।

साइकिल के वाल्व पर ध्यान दो। देखो कि वह हवा को ट्यूब से बाहर निकलने से कैसे रोकता है। (चित्र-5)।

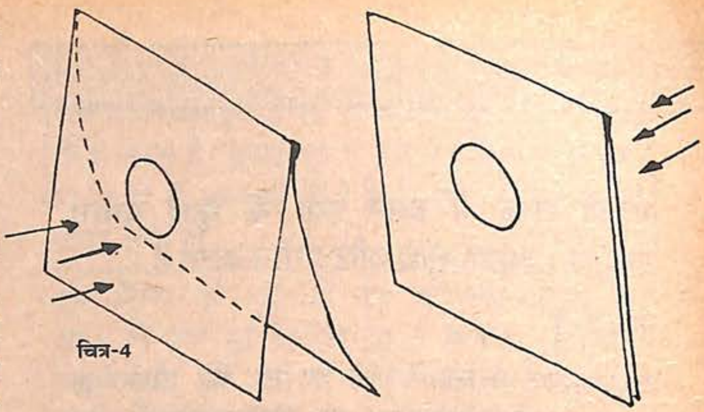
साइकिल से पंप को खोलकर उसके वॉशर का निरीक्षण करो (चित्र-6)।

क्या तुम बता सकते हो कि पंप द्वारा साइकिल की ट्यूब में हवा कैसे जाती है?

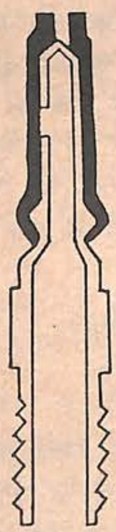
अगर साइकिल पंप के अंदर के वॉशर को उलटकर लगा दें और फिर पंप को चलाएं तो क्या होगा?

चित्र-7 देखो। इसमें पानी निकालने के एक काम करते हुए हैंडपंप की विभिन्न स्थितियों के चित्र हैं। क्या तुम इस पंप के काम करने का तरीका समझा सकते हो?

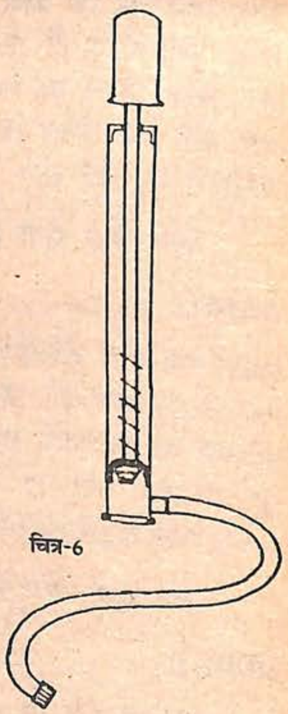
अक्सर पुराने पंपों को चालू करने के लिए उनमें पानी डाला जाता है। ऐसा क्यों करते हैं?



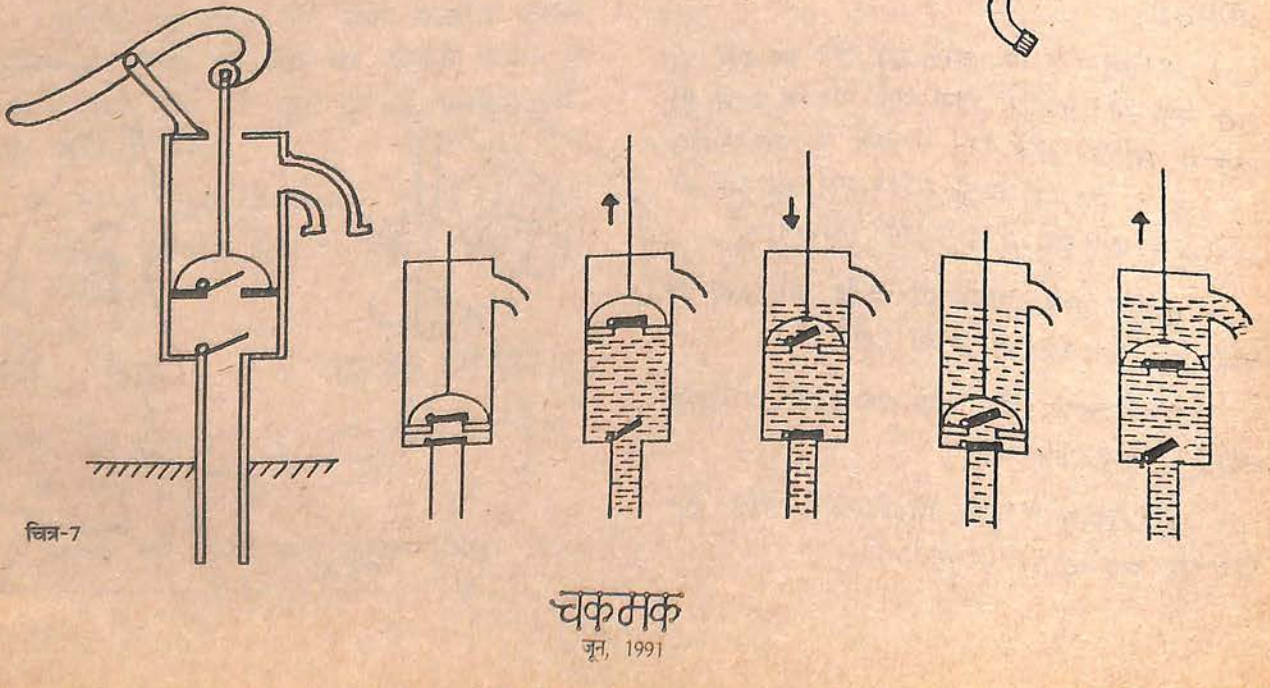
चित्र-4



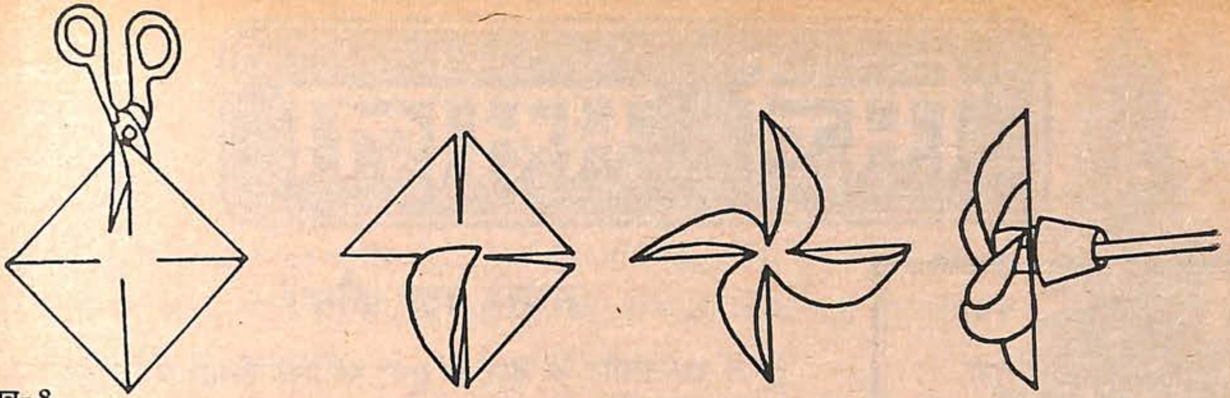
चित्र-5



चित्र-6



चित्र-7



चित्र- 8

प्रयोग-5

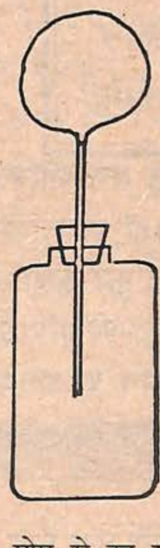
तुमने काग़ज़ की फिरकिनियां तो बहुत बनाई होंगी। न बनाई हो तो अब बना लो। एक चौकोर काग़ज़ लो। उसे कर्ण की लाइनों पर इस प्रकार काटो (चित्र-8) कि बीच में काग़ज़ जुड़ा रहे। फिर इसे चित्र में दिखाए तरीके से मोड़कर बीच में एक आलपिन लगा दो। एक सरकंडा या ठठेरा लेकर उसके सिरे पर पिन को लगा दो। अब हथेलियों के बीच सरकंडे को पकड़कर फिरकी को घुमाओ।

देखो घूमती हुई फिरकी हवा को किस ओर धकेलती है?

कुओं से पानी खींचने के पंप इसी तरह काम करते हैं। इनमें पंखों के घूमने से पानी आगे धकेला जाता है।

प्रयोग-6

ग्लूकोज़ बोतल को रबर के एक छेदी कार्क द्वारा कसकर बंद कर लो। अब छेद में से कांच की एक नली डाल दो और नली के बाहरी सिरे पर एक फुग्गा बांध लो (चित्र-9)। ध्यान रहे कि कांच की नली व छेद के बीच से और कार्क तथा ग्लूकोज़ बोतल के मुंह के बीच से हवा निकलने का रास्ता न रहे। ज़रूरत



चित्र- 9

हो, तो लाख या मोम से इन रास्तों को सील कर दो। अब बोतल को धीरे-धीरे गरम करो।

देखो फुग्गे को क्या होता है? सोचो ऐसा क्यों होता है?

बोतल को ठंडा होने के लिए छोड़ दो (पर ठंडा करने के लिए पानी मत डालना)।

बोतल को ठंडा करने पर फुग्गे की क्या दशा होती है? सोचो ऐसा क्यों होता है?

(सामग्री तथा चित्र बालवैज्ञानिक से)

(शेष पृष्ठ 24 का)

आ जाती है और हवा निकल जाती है। इसे भी तुम देख सकते हो।

जिन पाठकों ने उत्तर भेजे : प्रकाश चंद्र शर्मा, कमलेश अग्रवाल, सीताराम जांगिड़, हनुमान सहाय रावत, धर्मपाल मीणा, सुरेश रावत, सभी पालड़ी, जयपुर। चेतनराम जाट, ललित हर्ष, जयपुर। सुशील जोशी, सुगनराम गौड़, अनुराग शर्मा, देसूरी, पाली। जगदीश बागड़ी, बूंदी। तेजसिंह राजपाल, हनुमानगढ़, श्री गंगानगर, दीनदयाल सिसोदिया, मेतवाला, बांसवाड़ा। गोपाल लाल माली, मालीखेड़ा, चित्तौड़गढ़। मनीष मोदी, कोटा। **सभी राजस्थान**। विनोद कुमार सिंह, दोलईचा, रोहतास। पियूष कांति, सोम पिकासो, औरंगाबाद। शिखा वर्मा पटना। सत्य सरोज, सीतामढ़ी। नीरज भारती, हाजीपुर **सभी बिहार**। संजय कुमार, शाहजहांपुर। बृजेश शाक्य, नानमई, मैनपुरी। उमेशचंद्र, केसरीपुर, सीतापुर। **सभी उत्तर प्रदेश**। बृजेश काबरा, हरदा। राधेश्याम यादव, बेलसोंडा। श्यामसुंदर कोसे, खोरपा, दुर्ग। अर्पणा कनोड़िया, ग्वालियर। सीताराम शुक्ल, राम अवतार गुप्ता, कुठिया मोहगांव, जबलपुर। सीमा व्यास, पनागर, जबलपुर। संध्या गुप्ता, रायगढ़। प्रणोद बोकिल, सोंडवा, झाबुआ। आशुतोष नामदेव, सतना। आरिफ़ शेख, बुजूर्ग, खरगोन। अजय रोजड़े, देवास। संजय यादव, पानसेमल, खरगोन। **सभी मध्यप्रदेश**। मृत्युंजय ठाकुर, **दिल्ली**।

मिर्च मसाला



क्या तुम यक़ीन करोगे?

सबसे बड़ा कौन?

तुमने डायनासॉर के बारे में सुना या पढ़ा होगा। ये विशाल जीव करोड़ों साल पहले पृथ्वी पर घूमते थे और लगभग 6.5 करोड़ साल पहले अचानक लुप्त हो गए।

सबसे बड़ा डायनासॉर *ब्रेकायोसॉरस* 15 करोड़ साल पहले तक जीवित था। ब्रेकायोसॉरस का मतलब है बाहों वाला सरीसृप। हां, डायनासॉर सरीसृप परिवार के सदस्य थे। यूं *ब्रेकायोसॉरस* 21 फुट ऊंचा था, लेकिन जब वह अपनी गर्दन उठाता तो 40 फुट की ऊंचाई तक पहुंच जाता - यानी चार मंज़िल वाले मकान के बराबर। आज के सबसे बड़े जानवर - हाथी - से वह 13 गुना अधिक वज़नदार था यानी कुल 80 टन।



ब्रेकायोसॉरस

सबसे बड़ा स्तनधारी एक गेंडा (रायनॉसरस) था जो *बलूचीथीरियम* के नाम से जाना जाता है। इस गेंडे का नाक वाला सींग नहीं था। ऊंचाई में 18 फुट तथा लंबाई में 28 फुट वाले इस जानवर का वज़न 20 टन था।



अफ़्रीकी हाथी

सबसे बड़ा प्राइमेट *जायकेंटोपिथेकस* नामक एक वन मानुष था, जो 9 फुट ऊंचा व 450 किलो वज़न का था। इसके मुकाबले में आधुनिक युग का सबसे बड़ा प्राइमेट एक गुरिल्ला है जो आदमी की ऊंचाई के बराबर है और जिसका वज़न 180 किलो है। जहां तक स्तनधारियों का सवाल है, उनमें सबसे बड़ा अफ़्रीकी हाथी है जो 11 फुट ऊंचा तथा 6 टन वज़न का है।

पक्षियों के संदर्भ में आज का सबसे बड़ा उड़ने वाला पक्षी कोरी बस्टर्ड है जो 18 किलो का है। पर सबसे लंबे पंख एल्बेट्रॉस के होते हैं - 11 फुट लंबे।



टेरोसॉर

एल्बेट्रॉस



शुतुरमुर्ग

इसके मुकाबले में प्रागैतिहासिक काल में एक गिद्ध होता था जिसके पंखों की कुल लंबाई 25 फुट थी। पर सबसे बड़ा उड़ने वाला जीव, पक्षी नहीं बल्कि एक सरीसृप था - *टेरोसॉर*। 6.5 करोड़ साल पहले पाए जाने वाले इस जीव के पंखों की लंबाई 40 फुट थी।

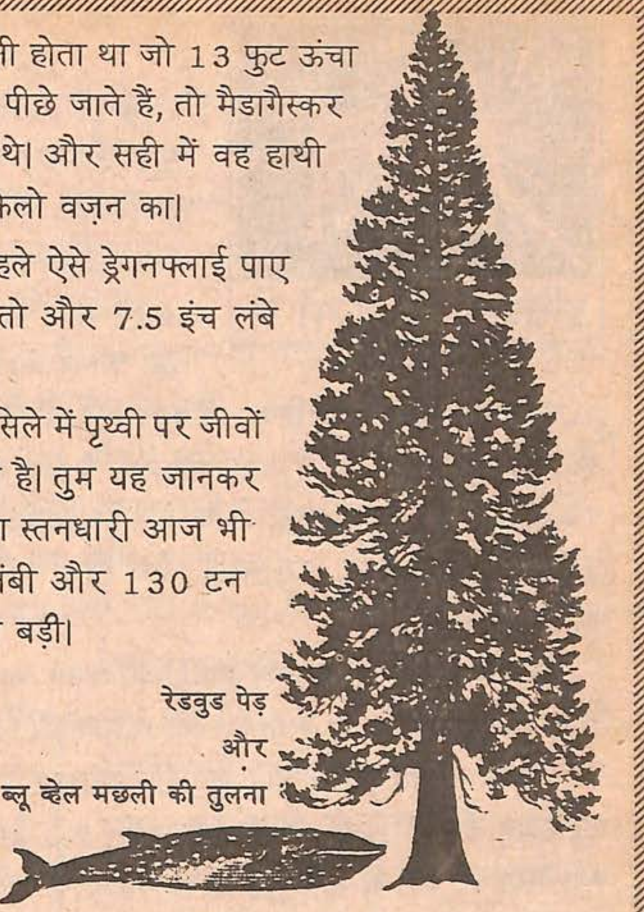
यह हुई उड़ने वाले पक्षियों की बात। इनसे भी बड़े पक्षी होते हैं, पर वे उड़ नहीं पाते हैं। जैसे शुतुरमुर्ग। यह 8 फुट ऊंचा और 120 किलो वज़न का होता है। दो-तीन

सौ साल पहले तक न्यूज़ीलैंड में मोआ नामक एक पक्षी होता था जो 13 फुट ऊंचा व 230 किलो वज़न का था। यदि हम 400 साल पीछे जाते हैं, तो मैडागैस्कर में एक पक्षी पाया जाता था जिसे हाथी पक्षी कहते थे। और सही में वह हाथी के बराबर था - 10 फुट ऊंचा और कुल 450 किलो वज़न का।

जहां तक कीड़ों का सवाल है, 30 करोड़ साल पहले ऐसे ड्रेगनफ्लाई पाए जाते थे जिनके पंखों की लंबाई 2.5 फुट थी। और तो और 7.5 इंच लंबे झींगुर भी पाए जाते थे।

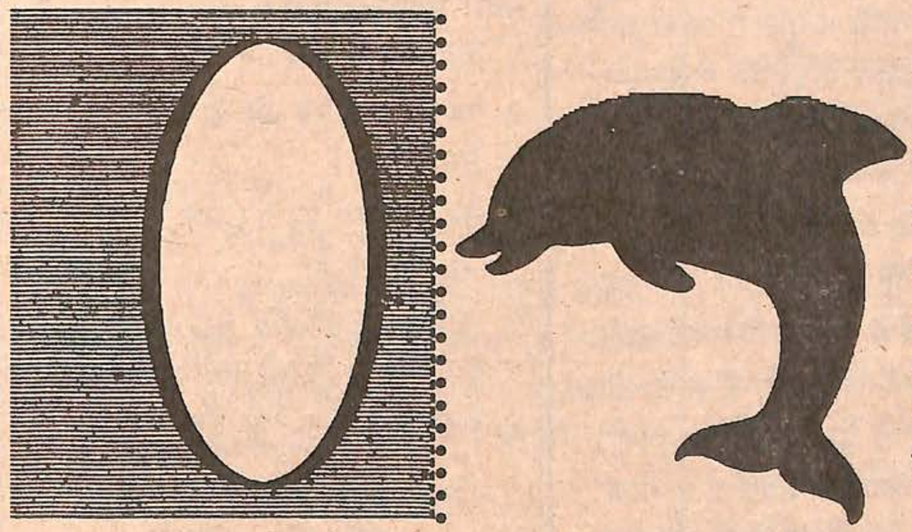
यह सब जानकर ऐसा लगता है कि विकास के सिलसिले में पृथ्वी पर जीवों का आकार व वज़न घट रहे हैं। पर ऐसा कतई नहीं है। तुम यह जानकर आश्चर्यचकित होगे कि पृथ्वी के इतिहास में सबसे बड़ा स्तनधारी आज भी जीवित है। वह है नीली व्हेल मछली। यह 90 फुट लंबी और 130 टन वज़नी होती है - सबसे बड़े डायनासॉर से 2.5 गुना बड़ी।

पृथ्वी के इतिहास का सबसे बड़ा और ऊंचा जीव आज भी जिंदा है। वह न तो जानवर है न सरीसृप। सबसे ऊंचा जीव कैलिफोर्नियां का रेडवुड पेड़ है जो 400 फुट की ऊंचाई तक उगता है। और सबसे वज़नी जीव भी एक पेड़ है - वहीं का सेकोइया पेड़, जो 6700 टन का होता है।



रेडवुड पेड़ और ब्लू व्हेल मछली की तुलना

खेल खेल में



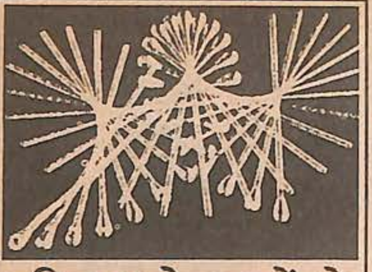
अपनी आंखों को खुला रखते हुए इस पन्ने को नाक तक ले आओ। फिर नाक को बिंदुवार रेखा पर ऊपर से नीचे तक सरकाओ। डॉल्फ़िन चक्र के भीतर गया या नहीं?

उन्होंने कहा था. . .

यदि मैं ज़्यादा देख पाता हूं तो इसलिए कि मैं अपने पूर्वजों के कंधों पर खड़ा होकर देख रहा हूं।

आइज़ेक न्यूटन





इतिहास के पन्नों से

मूंगफली का इतिहास

घर में खाना पकाने के लिए तुम कौन-सा तेल इस्तेमाल करते हो? मूंगफली का? यह कोई आश्चर्य की बात नहीं होनी चाहिए। क्योंकि हमारे देश में दो-तिहाई लोग इसी खाद्य तेल - यानी खाने वाला तेल - का उपयोग करते हैं। पर इस बात से तुम ज़रूर चौंक जाओगे कि 450 साल पहले भारत में मूंगफली का नामोनिशान नहीं था। चलो, इस फ़सल की कहानी पर गौर करें।

मूंगफली दक्षिण अमेरिका की मूल निवासी है। लगभग 2100 साल पहले इसका पौधा ब्राज़ील के माटो ग्रासो क्षेत्र में पाया गया था। बाद में यह बोलिविया के एंडीज़ पर्वत तथा पेरू में भी पाया गया। पर दो अलग-अलग प्रजातियों के रूप में। ब्राज़ील वाली प्रजाति बड़ी फलियों वाले ऐसे पौधे की थी जो ऊपर की ओर उगता था। जबकि पेरू की प्रजाति ज़मीन पर फैलने वाले पौधे की थी। उसकी फलियां छोटी भी थीं।

पुर्तगाल के नाविक ब्राज़ील प्रजाति को अपने साथ पश्चिम अफ्रीका ले गए जबकि स्पेनी नाविकों ने पेरू प्रजाति को प्रशांत सागर पार कर फ़िलिपाइन्स तक पहुंचाया। फ़िलिपाइन्स से ही मूंगफली का पौधा मलेशिया व चीन से होते हुए भारत पहुंचा, लगभग 450 साल पहले। शायद यही कारण था कि 100 साल पहले दक्षिण भारत में इसके दाने को चीनी बदाम/मनीला कोट्टई जैसे नामों से पुकारा जाता था।

शुरू में लोगों ने इसे उगाने में ज़्यादा दिलचस्पी नहीं दिखाई। फ़सल के रूप में सबसे पहला प्रयास सन् 1800 में हुआ। 1850 में कुल 1000 हेक्टेयर ज़मीन में इसे बोया गया और उत्पादन 1200 टन हुआ। अगले 40 साल में यह फ़सल फैलने लगी पर तभी किसी कारणवश उपज में एकदम गिरावट आई।

कुछ साल बाद एक सज्जन ने मोज़ाम्बीक से नई किस्म के बीज मंगाए। तब से इस फ़सल का काफ़ी फैलाव हुआ। दस साल के अंदर उत्पादन 2.5 लाख टन तक पहुंच गया। आज देश में हर साल औसतन 70 लाख टन मूंगफली पैदा होती है।

अंत में एक मज़ेदार बात। अमेरिका में जॉर्ज वाशिंगटन कार्वर नाम का एक वैज्ञानिक रहा करता था जिसने मूंगफली के दानों से 100 से अधिक नई चीज़ें बनाईं - जैसे मक्खन, प्लास्टिक आदि।

बाल वैज्ञानिक

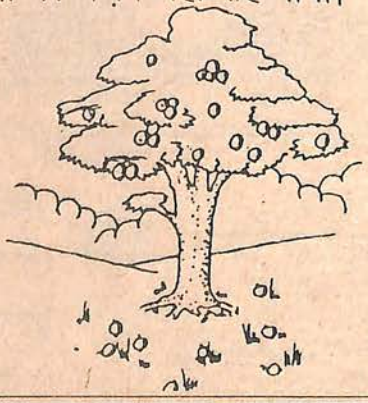


तुम कितने तार्किक हो?

नीचे दिया चित्र खेत में खड़े सेब के पेड़ का है। इसे ध्यान से देखो। फिर नीचे दिए कथनों को पढ़ो।

चित्र के आधार पर इनमें से कौन सा कथन सबसे सही लगता है?

1. हवा के चलने से पेड़ से कई सेब गिरे हैं।
2. पेड़ पर लगे सेब पके हैं। वे तोड़ने के लिए तैयार हैं।
3. सेब न केवल पेड़ पर लगे हैं परंतु ज़मीन पर भी पड़े हैं।
4. ज़मीन पर पड़े सेब सड़ रहे हैं।
5. सेब इसलिए गिरे हैं क्योंकि पेड़ इतने सारे सेबों का वज़न नहीं सह पाया।





अक़्ल दाढ़ इतनी तकलीफ क्यों देती हैं?

अक़्ल दाढ़ से अक़्ल कम, परेशानी ज़्यादा होती है। आख़िर क्यों? क्योंकि क़ायदे से इनके लिए जबड़े में कोई जगह ही नहीं है।

असल में अक़्ल दाढ़ हमारे पूर्वजों की निशानी है। यानी एक ज़माने में उनका उपयोग होता तो था, पर अब हमारे खाने-पीने के तौर-तरीके इतने बदल चुके हैं कि इन दाढ़ों के लिए कोई काम ही नहीं रह गया है। हमारे पूर्वज ऐसा भोजन खाते थे जिसे अधिक चबाना पड़ता था। चबाने का काम यही अक़्ल दाढ़ करती थीं। यानी वे चवर्णक या मोलर दाढ़ हैं। पर जैसे-जैसे हम अधिक पचने लायक भोजन खाने लगे तो चबाने की कम ज़रूरत पड़ने लगी और ये दाढ़ बेकार हो गईं। इसी विकास के दौरान हमारे जबड़े भी कम चौड़े हो गए। यहां तक कि अब उनमें केवल 32 दांतों के लिए ही जगह बची है। फिर भी चार अक़्ल दाढ़ अभी भी उगती हैं।



आम तौर से ये दाढ़ 18 साल की उम्र के बाद ही उगती हैं। यानी जब हम अक़्लमंद बन जाते हैं। शायद इसी वजह से इनका नाम अक़्ल दाढ़ पड़ा। तुम सोच रहे होंगे कि क्या 18 साल से पहले हममें अक़्ल नहीं होती? खैर . . .

चूंकि इनके लिए पर्याप्त जगह नहीं होती है इसलिए वे या तो जकड़ी हुई होती हैं या फिर ग़लत जगह निकलती हैं। दोनों ही स्थितियों में परेशानी होती है।

इन दाढ़ों के आने के कई लक्षण होते हैं - सूजन, मुंह खोलने में दिक़्क़त, निगलने में तकलीफ़, मुंह से बदबूदार लार, गाल का कटना आदि।

अब अंत में सोचने के लिए एक सवाल। हमने कहा कि अक़्ल दाढ़ एक ज़माने में उपयोगी थीं पर विकास के साथ-साथ अब अनावश्यक बन गई हैं। हमारे शरीर में ऐसे और कौन-कौन से अवशेष हैं जो हमारे पूर्व इतिहास को दर्शाते हैं?



करके देखो

नींबू का 'रस'



तुम्हें चाहिए :

एक नींबू, तांबे के तार का एक टुकड़ा, एक काग़ज़ क्लिप

तुम्हें क्या करना होगा :

कागज़ क्लिप को खोल कर सीधा कर दो। उसके एक छोर को नींबू में धंसा दो। तांबे के तार के एक छोर को भी नींबू में धंसा दो - क्लिप के बगल में ही कहीं। पर ध्यान रहे कि दोनों एक दूसरे को छूएं नहीं। अब दोनों तारों के स्वतंत्र सिरों को पास-पास लाओ और उन्हें अपनी जीभ से छूओ। जीभ पर कुछ झुनझुनी महसूस हुई?

विज्ञान का सवाल :

ऐसा क्यों महसूस हुआ? नींबू का रस दोनों तारों के बीच इलेक्ट्रॉनों के प्रवाह का पथ प्रदर्शित करता है। तुम्हारी नम जीभ इस परिपथ को पूरा कर देती है। यानी बिजली का प्रवाह जीभ से होता हुआ गुज़रता है। इसीलिए झुनझुनी महसूस होती है।

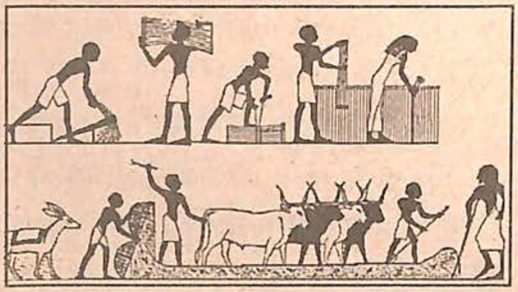
कल

और

आज

दुनिया का सबसे प्राचीन खेत

वैज्ञानिकों का अंदाज़ है कि आधुनिक मानव *(होमो सेपियन्स सेपियन्स)* का विकास लगभग एक लाख साल पहले हुआ था। उस समय वह कंदमूल बटोरकर व शिकार करके अपना गुज़ारा करता था। तो फिर उसने खेती करना कब शुरू किया? और कहां? इस मुद्दे पर इतिहासकार एकमत नहीं हैं। अंदाज़ है कि खेती की शुरूआत लगभग 12 हज़ार साल पहले हुई थी। वह भी किसी एक जगह पर नहीं, बल्कि कई जगहों पर - साथ-साथ। ख़ास कर उन स्थानों में जहां पहाड़, नदियां और मैदान एक साथ पाए जाते हैं। जैसे मध्य व पश्चिम एशिया और थाईलैंड में। यहां से खेती नदी घाटियों में फैली जहां बाद में प्राचीन सभ्यताएं शुरू हुई, जैसे मिस्र की नील नदी, इराक (मेसोपोटेमिया) की यूफ्रेटीस नदी, भारत/पाकिस्तान की सिंधु नदी व चीन की ह्वांग हो नदी।





ऊपर के चित्र 5000 साल पहले मिस्र घाटी की खेती को दर्शाते हैं। यही समय था जब लोगों ने जुताई में बैलों का प्रयोग शुरू किया था। इसके पहले वे नुकीले डंडों से ज़मीन खोदकर बीज बोते थे। उस समय और आज की खेती में बहुत समानताएं दिखती हैं न।

प्राचीन खेती के संबंध में कई प्रमाण पाए गए हैं। ख़ासकर बचे हुए अनाजों के रूप में। जैसे मध्य एशिया में गेहूं के दाने पाए गए हैं और थाइलैंड में मटर, ककड़ी आदि।

कुछ साल पहले, भारत में एक जुता हुआ खेत पाया गया। हां, लगभग 5000 साल पुराना खेत। राजस्थान के गंगानगर जिले के कालीबंगन नामक स्थान पर खुदाई करते समय पुरातत्व-शास्त्रियों को यह जुता हुआ खेत मिला। उनके अनुसार यह खेत सिंधु सभ्यता से भी पुराना है।



इस खेत का चित्र बांए दिया हुआ है। साथ में आज के जुते हुए खेत का भी चित्र दिया हुआ है (दांए)। दोनों में कोई समानता दिखती है?

हल के निशानों को ध्यान से देखो। क्यारियों के निशान दो दिशाओं में नज़र आते हैं। पश्चिम-पूर्व दिशा में क्यारियां पास-पास हैं - लगभग 30 से.मी. की दूरी पर। उत्तर-दक्षिण की क्यारियां 1.9 मीटर की दूरी पर हैं। इन क्यारियों के आधार पर यह अंदाज़ लगाया गया है कि लोग एक ही खेत में दो फ़सलें बोते थे। पास वाली क्यारियों में चने की फसल और दूर वाली क्यारियों में सरसों।

क्यारियों की दिशा की एक और ख़ासियत है। ये फ़सलें सर्दी के दिनों में बोई जाती हैं। इस मौसम

शब्द शब्द शब्द शब्द शब्द शब्द शब्द शब्द शब्द शब्द शब्द

किमियागरी

किमियागरी, अल्केमी, केमिस्ट्री . . . . तीन अलग-अलग शब्द। पर तीनों के उच्चारण में कहीं कुछ समानता है न। किमि . . . . केमी. . . . केमि. . . . पहला शब्द हिन्दी भाषा का है और बाकी दो अंग्रेज़ी. तो फिर यह समानता कैसे, क्यों और कहां से? कहीं इनके मूल एक तो नहीं है?

कुछ लोगों का कहना है कि 'केमी' एक अरबी शब्द है। खासकर इसलिए क्योंकि अल्केमी का 'अल' अरबी भाषा का है। 'केमी' का मूल अर्थ 'काली मिट्टी' है। यह काली मिट्टी का संदर्भ मिस्र देश से है। यानी इस शब्द का अर्थ है 'मिस्र की कला'। दूसरी तरफ लोग कहते हैं कि 'केमी' यूनानी भाषा से उभरा है। उसका मतलब है 'उड़ेलना'। यानी पेड़-पौधों के स्रावों को मिलाना व उड़ेलना। पेड़-पौधों से बढ़कर यह शब्द सभी पदार्थों के मिलाने व उड़ेलने से संबंधित हो गया।

परंतु, चाहे शब्द यूनानी हो या अरबी। एक बात तो साफ़ है। ज्योतिष के साथ, किमियागरी सभी प्राचीन सभ्यताओं में पाया जाता है - चीन, भारत, अरब, मिस्र, यूनान, रोम आदि। ये दोनों अध्ययन आज नकली विज्ञान के श्रेणी में आते हैं पर उन दिनों वे मानव और ब्रह्मांड के बीच के रिश्ते या कड़ी को ढूंढने में लगे थे। किमियागरी का मुख्य लक्ष्य था मानव और प्रकृति के बीच का संबंध जोड़ना। यह प्रयास दो दिशाओं में आगे बढ़ा। भारत और चीन में मुख्य उद्देश्य उस द्रव्य की खोज थी जिसे पीने पर मनुष्य अमर हो सके। बुढ़ापे से मुक्त हो सके। जबकि यूनान व यूरोपीय देशों में लक्ष्य था तांबा, सल्फर जैसे मामूली धातुओं को सोने में बदलना। तुम यक़ीन नहीं करोगे, आइज़ेक न्यूटन जैसे विख्यात वैज्ञानिक भी इस खोज में सालों तक लगे रहे।

आज यह सब जादू टोने जैसा लगता है न। क्योंकि आज हम जानते हैं कि दोनों प्रयास वैज्ञानिक दृष्टि से असंभव है। फिर भी हम इस बात को नकार नहीं सकते कि इन्हीं खोजों से धातुओं, दवाओं, व अम्ल जैसे रसायनों संबंधी नई-नई जानकारियां उभरी हैं। इन नकली विज्ञानों से ही केमिस्ट्री और औषधि विज्ञान का विकास हुआ और इनके विकास का मुख्य स्रोत 15वीं शताब्दी का एक अल्केमिस्ट ही था, जिसका नाम पैरासेल्सस था।

शब्द शब्द शब्द शब्द शब्द शब्द शब्द शब्द शब्द शब्द शब्द

(पिछले पृष्ठ से)

में हमारी छाया उत्तर दिशा में पड़ती है। इसलिए सरसों के ऊंचे पौधों को उत्तर-दक्षिण की क्यारियों में बोया जाता था ताकि उनकी छाया चने के पौधों पर न पड़े और उनकी वृद्धि को प्रभावित न कर सके। इससे तुम्हें अंदाज़ हो गया होगा कि उस समय के किसान कितने वैज्ञानिक ढंग से खेती करते थे। क्या आज भी ऐसा होता है?

और अंत में . . .

"नगद वाले डिसको
उधार वाले खिसको"

(पान की दुकान पर साईन बोर्ड)

यदि तुम्हें ऐसे मज़ेदार साईन बोर्ड कहीं दिखें तो चकमक को ज़रूर लिखना . . .

बावर्ची



माथापच्ची

(1)

इन *वाक्यों में कुछ अनावश्यक शब्द हैं—ढूंढो!*

1. तुम्हें एक गुप्त रहस्य बतलाऊं।

2. गरम आग किसी को भी जला सकती है।

3. खूब ठंडा बर्फ़ लाओ।

4. वे एक अच्छे आदमी हैं।

(2)

4, 18, 16, 8, 24,

इस समूह की चार संख्याएं एक ख़ास गुण दर्शाती हैं, लेकिन एक नहीं। उसे ढूंढो।

(3)

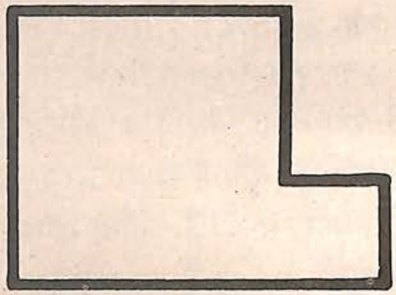
क्या तुम माचिस की तीन तीलियों को किसी समतल सतह पर इस तरह रख सकते हो कि उनका मसाले वाला सिरा सतह को न छुए। अगर तुम ऐसा करने में सफल हो जाओ तो फिर चार और छह तीलियों को भी इसी प्रकार रखने की कोशिश करो। ध्यान रहे कि किसी और चीज़ की मदद नहीं लेनी है।

(4)



ये चार आकृतियां अधूरी हैं। पर इनका आपस में एक महत्त्वपूर्ण रिश्ता है। आकृतियों को पूरा करो और रिश्ता ढूंढो।

(5)



इस आकृति को केवल दो सीधी रेखाओं से तीन टुकड़ों में इस तरह विभाजित करना है कि टुकड़ों को जोड़ने पर एक वर्ग बन जाए।

(6)

हमारे आसपास रोज़मर्रा उपयोग की ऐसी कई चीज़ें होती हैं जिनका उपयोग लगभग एक-सा ही होता है, पर नाम अलग-अलग। जैसे लिखने के लिए पेन, कलम, पेंसिल, बालपेन आदि का उपयोग होता है। इसी तरह क्या तुम सिर पर रखे जाने वाले वस्त्रों के नाम ढूंढ सकते हो, जैसे टोपी...। पैर में पहनने वाली चीज़ों के नाम खोजो जैसे चप्पल....। गले में पहनने वाली चीजों के नाम सोचो जैसे माला....।

(7)

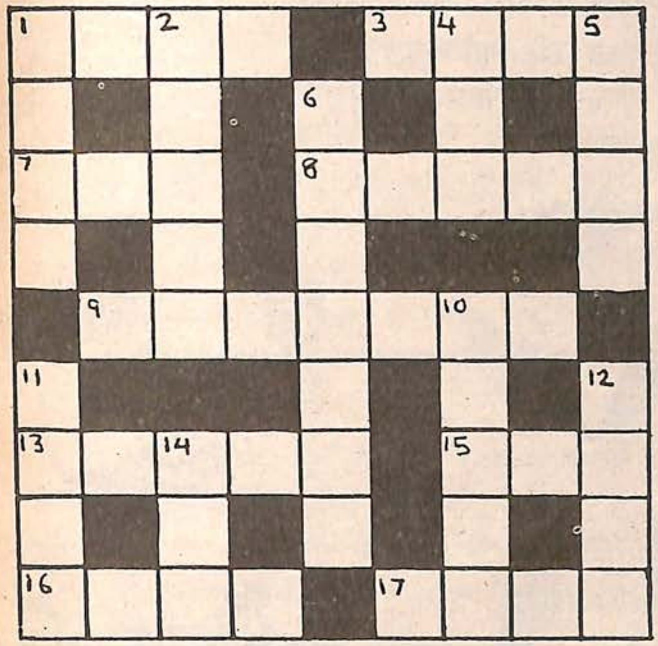
1-12 = 12

हमारा कहना है कि यह समीकरण सही है। कैसे, सोचो, माथापच्ची करो। चलो एक संकेत दे देते हैं—यह समय के बारे में बताता है।

(8)

बर्फ़ के एक टुकड़े में क्या तुम माचिस की एक तीली को पैक कर सकते हो?

वर्ग पहेली-2



संकेत : बांए से दांए

1. बुरी दौलत के सहारे (4)
3. मख़ौल (4)
7. गज का सिर, मारुति का धड़, बड़ की पूंछ मिलाओ (3)
8. पानी की लहरों में एक वाद्य यंत्र (5)
9. बिना काम के आमदनी (3, 1, 3)
13. वह प्रसिद्ध पुस्तक जिसमें वंदे मातरम् गीत है (5)
15. उदाहरण या मिसाल (3)
16. हजरानी में लूटपाट (4)
17. एक त्यौहार, जिसमें स्त्रियां गणेश और गौरी की पूजा करती हैं (4)

संकेत : ऊपर से नीचे

1. ताक़त के बाद दुख की खखार (4)
2. लकड़ी काटने वाला (5)
4. बड़ी थाली (3)
5. सात सुरों का क्रम (4)
6. यहां से कोई बेदाग नहीं आता (3,1,3)
10. ऐसे मेहमान, चाहें स्वीकार करें या न करें (2,1,2)
11. आं सबेरा, उलट-पुलट कर! (4)
12. एक दाल (4)
14. मेज़ में सामान रखने की जगह (3)

---

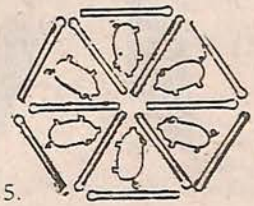
(9)

7 8 6 9 5 10 क ख 3 12

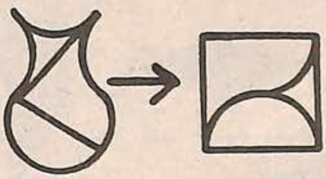
इस क्रम में क और ख की जगह कौन सी संख्याएं आएंगी?

माथापच्ची : उत्तर मई माह के

1. गोले नं. 1 से 2 तक जाने का सबसे छोटा रास्ता इन बिंदुओं से होकर जाता है 43, 46, 29, 16, 42, 5, 27, 21, 45, 14, 22, 31, 8, 38, 9, 2.
2. चार और सिक्के उन पांच सिक्कों में मिलाने हैं जो अलग किए गए हैं, उत्तर नौ तभी आएगा।
3. 53।



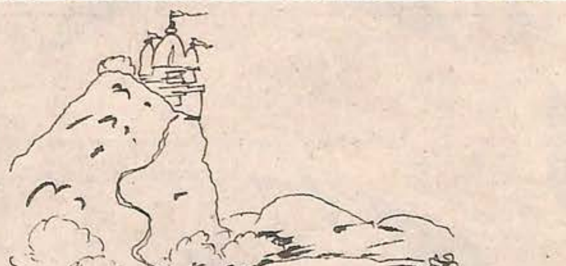
5.



6.

वर्ग पहेली-1 का हल



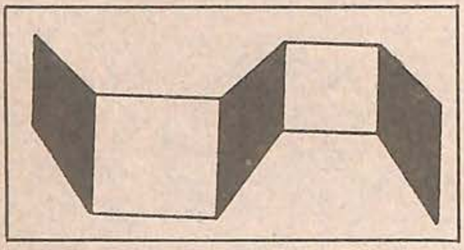


इस मंदिर के रास्ते में नदी बह रही है। नदी के तट पर ठिठक गए लोगों को तुम क्या सलाह दोगे?

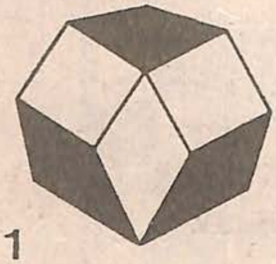
□ यूसुफ साहू, छत्तीसगढ़

दर्पण के संग खेलो

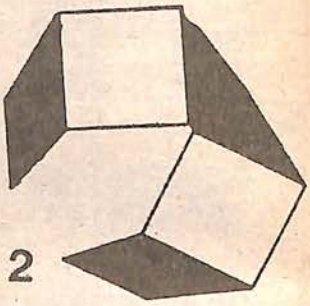
एक छोटा दर्पण या उसका टुकड़ा लो और **मास्टर चित्र** के पास रखकर उसका प्रतिबिंब देखो। प्रतिबिंब और मास्टर चित्र को मिलाकर एक नया चित्र बनता है। यहां दिए अन्य चित्र ऐसे ही बने हैं। दर्पण को थोड़ा आगे-पीछे खिसकाकर, तिरछा करके रखो और तुम भी बनाने की कोशिश करो!



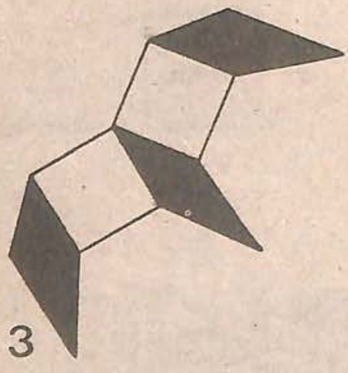
मास्टर चित्र



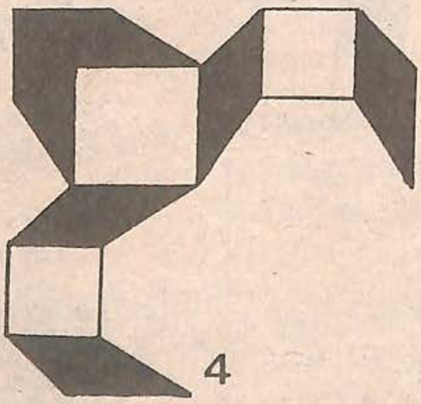
1



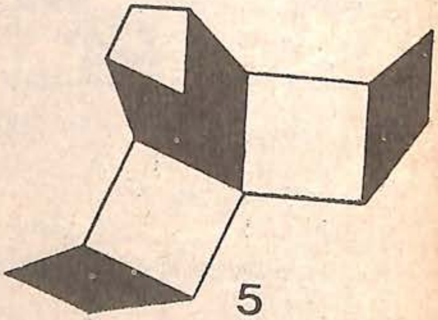
2



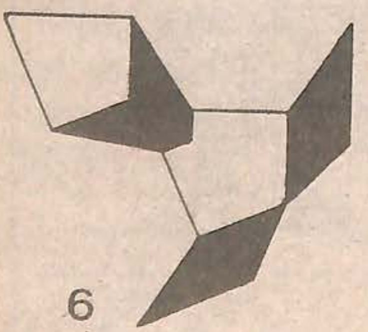
3



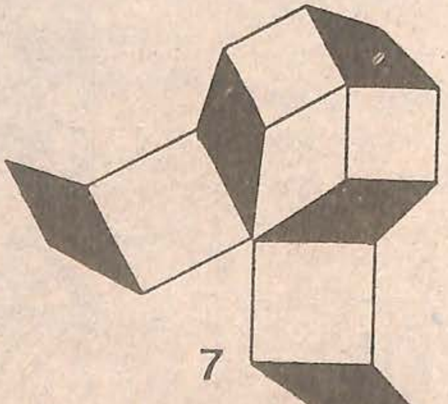
4



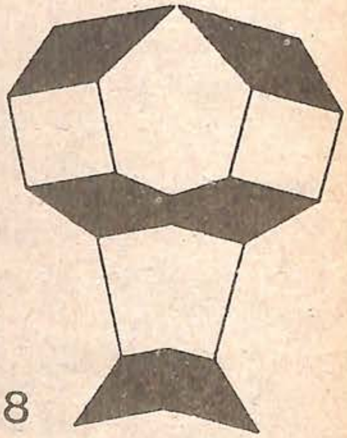
5



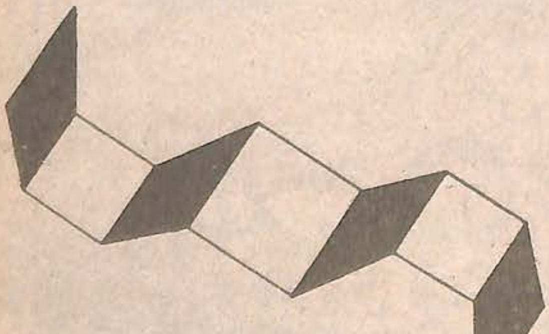
6



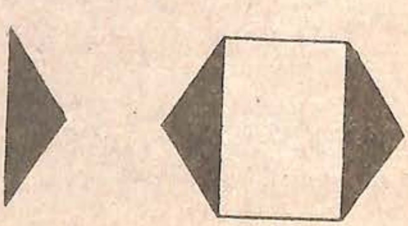
7



8



9



10

घोड़ा चित्रों में

घोड़ा हमारे जीवन में कुछ इस तरह घुल-मिल गया है कि हम सोच भी नहीं सकते, वह विदेशी जानवर है। सच बात तो यह है कि घोड़े को हमारे देश की आबोहवा (जलवायु) और घास रास ही नहीं आई। इसीलिए वह ठीक-ठाक ढंग से पल ही नहीं पाता। अच्छी नस्ल के घोड़े तो अरब देशों या मध्य एशिया से ही बुलवाने पड़ते हैं। ज़्यादा से ज़्यादा उनकी एकाध पीढ़ी अच्छी निकलती है, फिर नस्ल बिगड़ जाने पर नए घोड़े मंगवाने होते हैं।

घोड़े को भारत लाने का श्रेय कुछ पशु-पालक कबीलों को जाता है। उससे पहले तो यहां गधे ही घोड़ों का काम करते थे। घोड़ों को इस तरह मध्य एशिया से पकड़कर लाने का सिलसिला आज से तीन हज़ार साल पहले शुरू हुआ था।

विदेशी जानवर होते हुए भी हमारी लोककथाओं और लोककलाओं में घोड़े ने महत्त्वपूर्ण स्थान बना लिया है। आज भी गांव में घर-घर में जो चित्र बनते हैं, उनमें घोड़े देखने को मिलते हैं। घोड़े और सवारों के चित्र बनना आज से लगभग ढाई हज़ार साल पहले शुरू हो गए थे।

जंगल में चट्टानों पर भी घोड़े के चित्र मिलते हैं। आओ ऐसे ही कुछ चित्र देखते हैं।

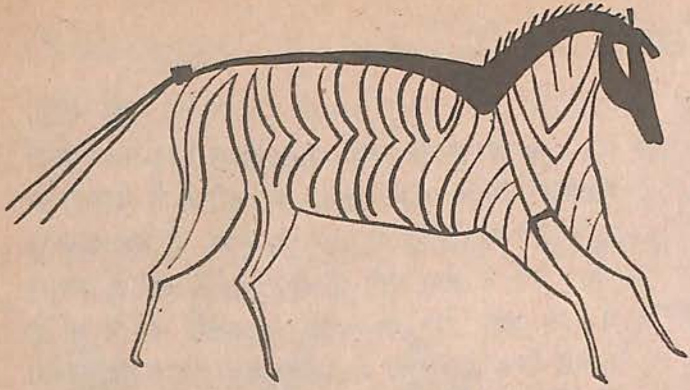
घोड़े का यह शायद सबसे पुराना चित्र है। इसे देखकर लगता है कि जिसने यह चित्र बनाया था, वह घोड़े के आकार या रूप से परिचित नहीं था।

समय गुज़रता गया। चट्टान पर चित्र बनाने वाले चित्रकार घोड़े व उसके सवारों का बारीकी से अवलोकन करने लगे थे। इसीलिए घोड़े के चित्र भी बेहतर बनने लगे। वैसे ये लोग स्वयं तो घोड़े पालते नहीं थे, जंगल में रहते ज़रूर थे। पर उन्होंने घुड़सवारों को जंगल से गुज़रते देखा होगा। हो सकता कभी-कभार उनसे मुठभेड़ भी होती हो।

भोपाल के पास सतकुंडा में चट्टानों पर घोड़े के बहुत ही सुंदर चित्र बने हैं। चित्रकारों ने घोड़े को अलग-अलग कोणों से देखा है। हर चित्र की अपनी एक ख़ासियत है। तुम भी देखो अगले पृष्ठ पर **चित्र 1, 2, 3, 4,** और **5**। इनमें से मुझे पाचवां चित्र बहुत प्रभावशाली लगता है। क्या रौबदार और गंभीर आकृति है। उठा हुआ सिर और सीधी गरदन। सिर भी कुछ इस तरह उठा है, जैसे उसे किसी की परवाह ही नहीं है। मुंह से लेकर अगले पांव तक लगभग सीधी लकीर है। इससे उसकी गंभीरता बढ़ जाती है। आमतौर पर घोड़े के चित्रण में ऐसा नहीं होता है। मगर यह घोड़ा सिर्फ़ गंभीर ही नहीं—सुंदर भी है। उसके शरीर पर बने फूल और बेल-बूटों से उसकी सुंदरता और अधिक उभर आती है!

घोड़ा है भी एक अद्भुत जानवर। तेज़ चाल और आकार की सुंदरता के कारण घोड़े को शक्ति और गति का प्रतीक माना गया है। यह मान्यता रही है कि घोड़े पर चढ़ने से मनुष्य को भी उसकी शक्ति और गति प्राप्त हो सकती है।

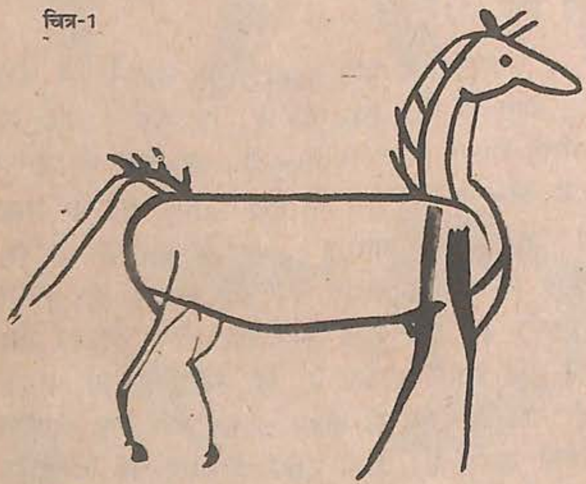




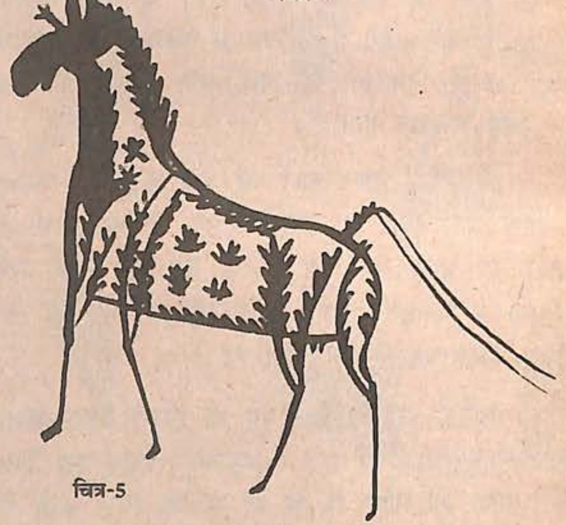
चित्र-1



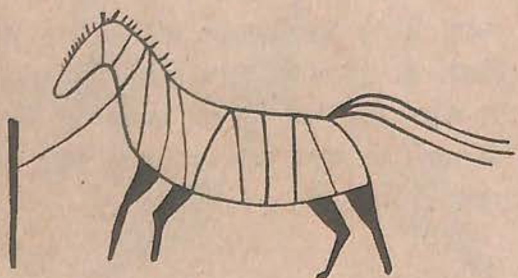
चित्र-4



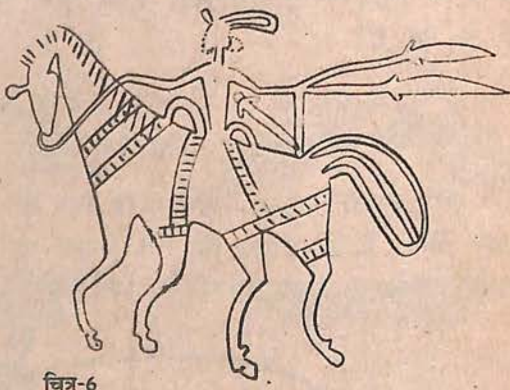
चित्र-2



चित्र-5



चित्र-3

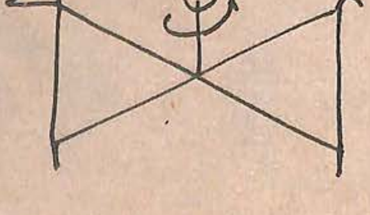


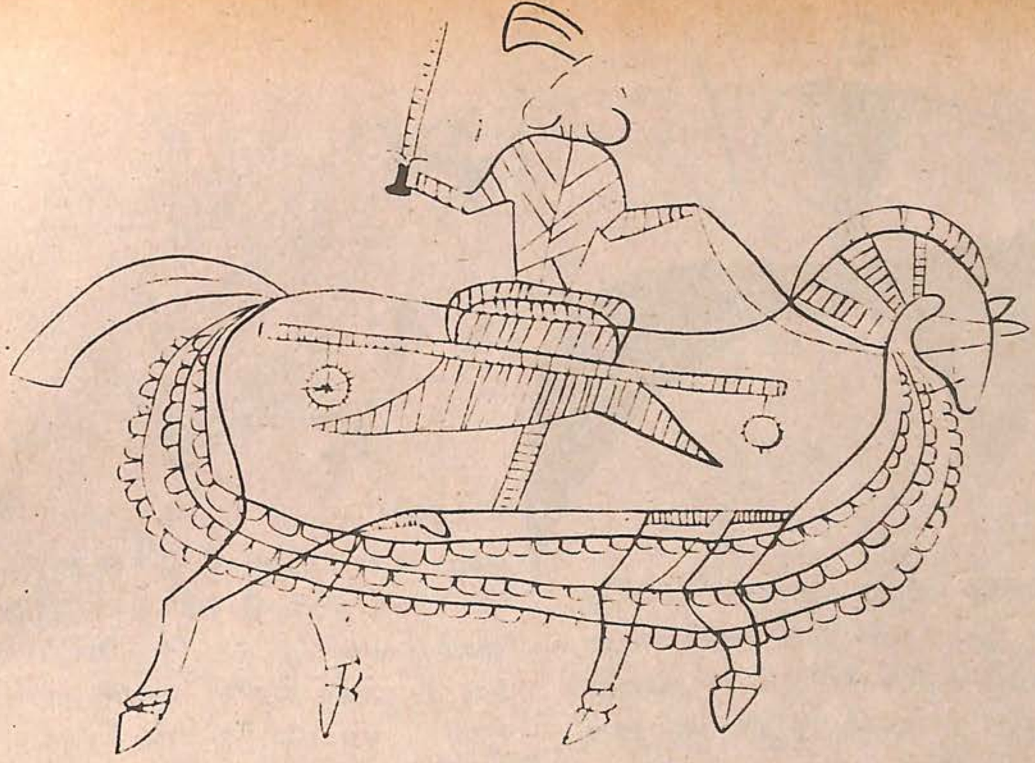
चित्र-6

आज भी उत्तर भारत में विवाह के लिए दूल्हा घोड़ी पर सवार होकर जाता है। राजा-महाराजा भी घोड़े को महत्व देते थे। घोड़ा सत्ता या राज करने की शक्ति का प्रतीक भी माना गया है।

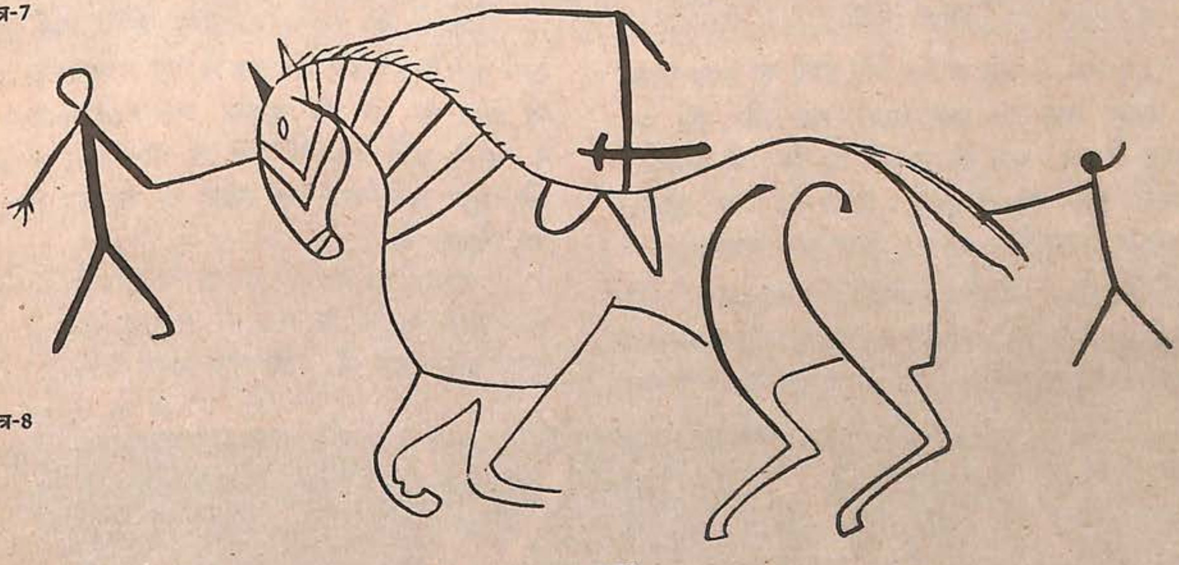
सतकुंडा की ही तरह भीम बैठिका (औबेदुल्लागंज) और होशंगाबाद के पास की चट्टानों पर भी तरह-तरह के घोड़े और उनके सवारों के चित्र हैं। हरेक की अपनी शान, अपना रौब है। **चित्र 6, 7, 8** देखो।

फिर धीरे-धीरे यह भी हुआ कि घोड़े को बहुत ही सरल रूप में चित्रित किया जाने लगा। देखो, तीन तिकोनों को जोड़ा और यह बन गया घोड़ा।

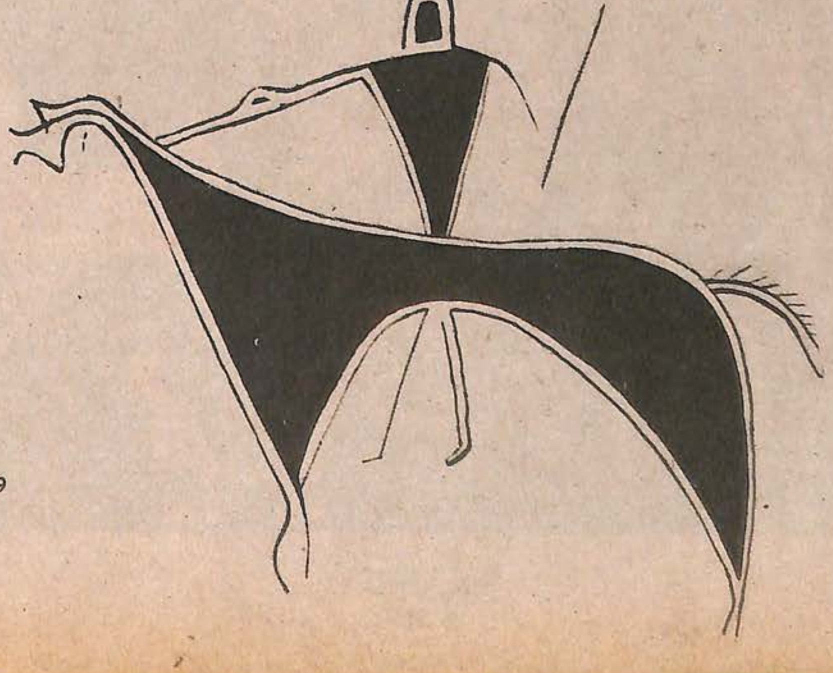




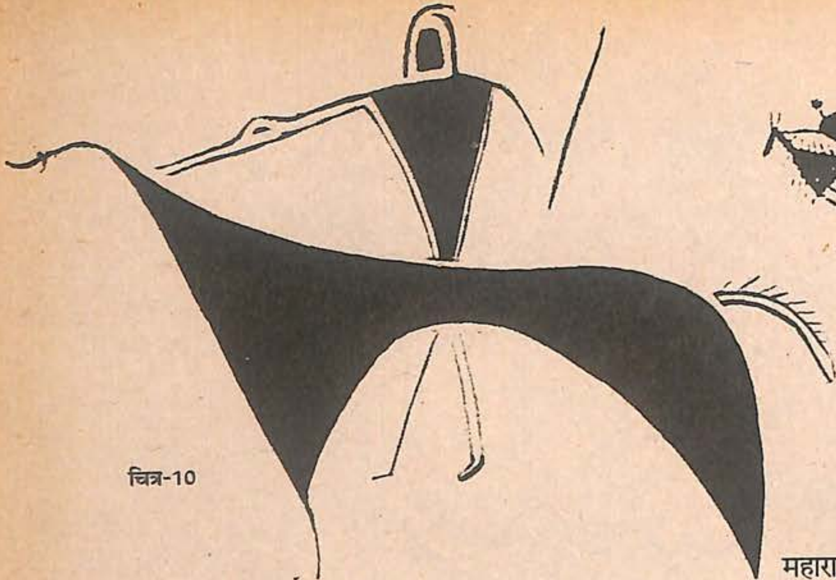
चित्र-7



चित्र-8



चित्र-9



चित्र-10



चित्र-11

इन्हीं तिकोनों को ज़रा अलग तरह से जोड़कर देखो। कितना खूबसूरत और सरल चित्र बनाया जा सकता है। तिकोनों में सीधी लकीरों की, जगह घुमावदार लकीरों के उपयोग से चित्र में एक लय और सुंदरता लाई जा सकती है। **चित्र-9** देखो।

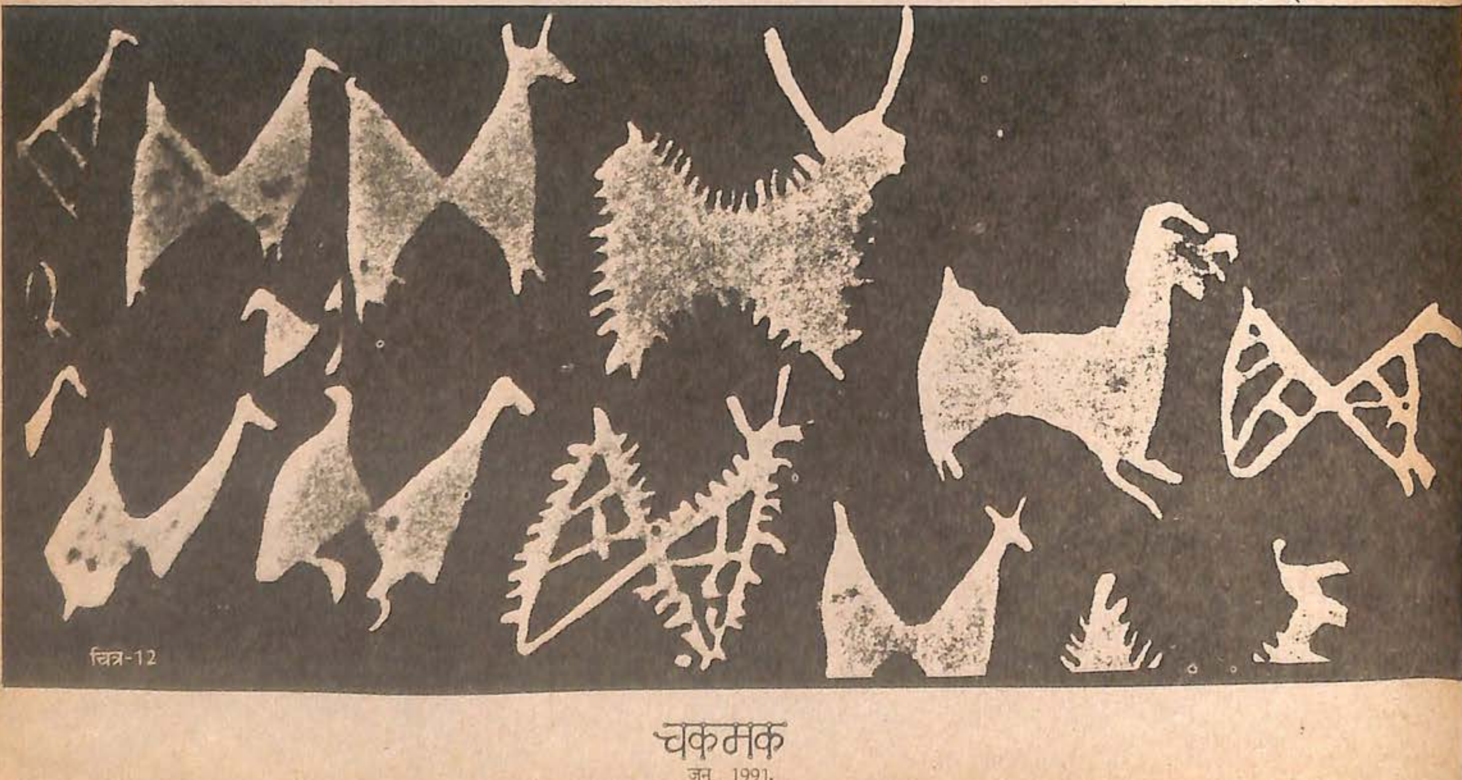
इस चित्र में घोड़े के सिर और टांगों को साफ़-साफ़ नहीं बनाया गया है। बस उसकी लय और गति पर ही सारा ज़ोर है। लय को उभारने के लिए भी चित्रकार ने आउट लाइन का ही उपयोग किया है। अगर आउट लाइन न हो तो यह कैसा लगेगा, **चित्र-10** देखो तो।

तिकोनों से घोड़े और मनुष्य की आकृतियां बनाने की परंपरा आज तक जारी है। आदिवासी और लोककला में इसका खासा उपयोग किया जाता रहा है। चाहे वह महाराष्ट्र के वर्ली आदिवासियों की कला हो **(चित्र-11)** या हिमाचल प्रदेश की किन्नर कला **(चित्र-12)**। लोककला में घोड़े को कई अन्य तरीकों से भी बनाया जाता है। गुजरात के भील आदिवासी अपने घरों की दीवारों पर सुंदर रंगीन चित्र बनाते हैं।

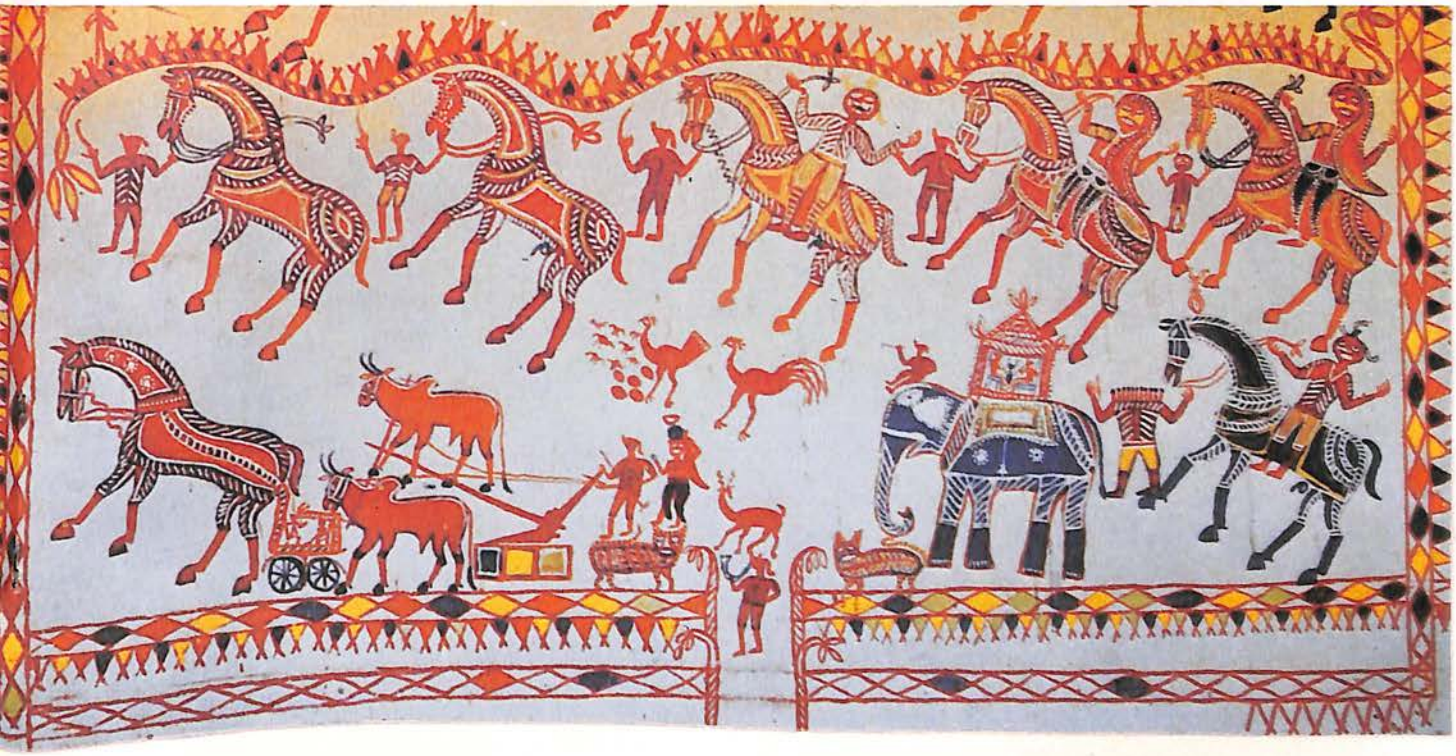
सामने के पृष्ठ पर प्रकाशित रंगीन चित्र देखो। ऊपर वाले चित्र में सारे घोड़े एक ही तरह के लगते हैं—फिर भी हरेक का रंग और बनावट अलग-अलग है। गांव में मिलने वाले साधारण रंगों से भी कितने आकर्षक और सुंदर चित्र बनाए जा सकते हैं, यह इन चित्रों से पता चलता है।

गुजरात के संपन्न घरों की दीवारों को भी घोड़े और उनके सवारों के चित्र से सजाया जाता है। पर कुछ अगल ढ़ग से, देखो नीचे वाला चित्र।

☐ **सी.एन. सुब्रह्मण्यम**

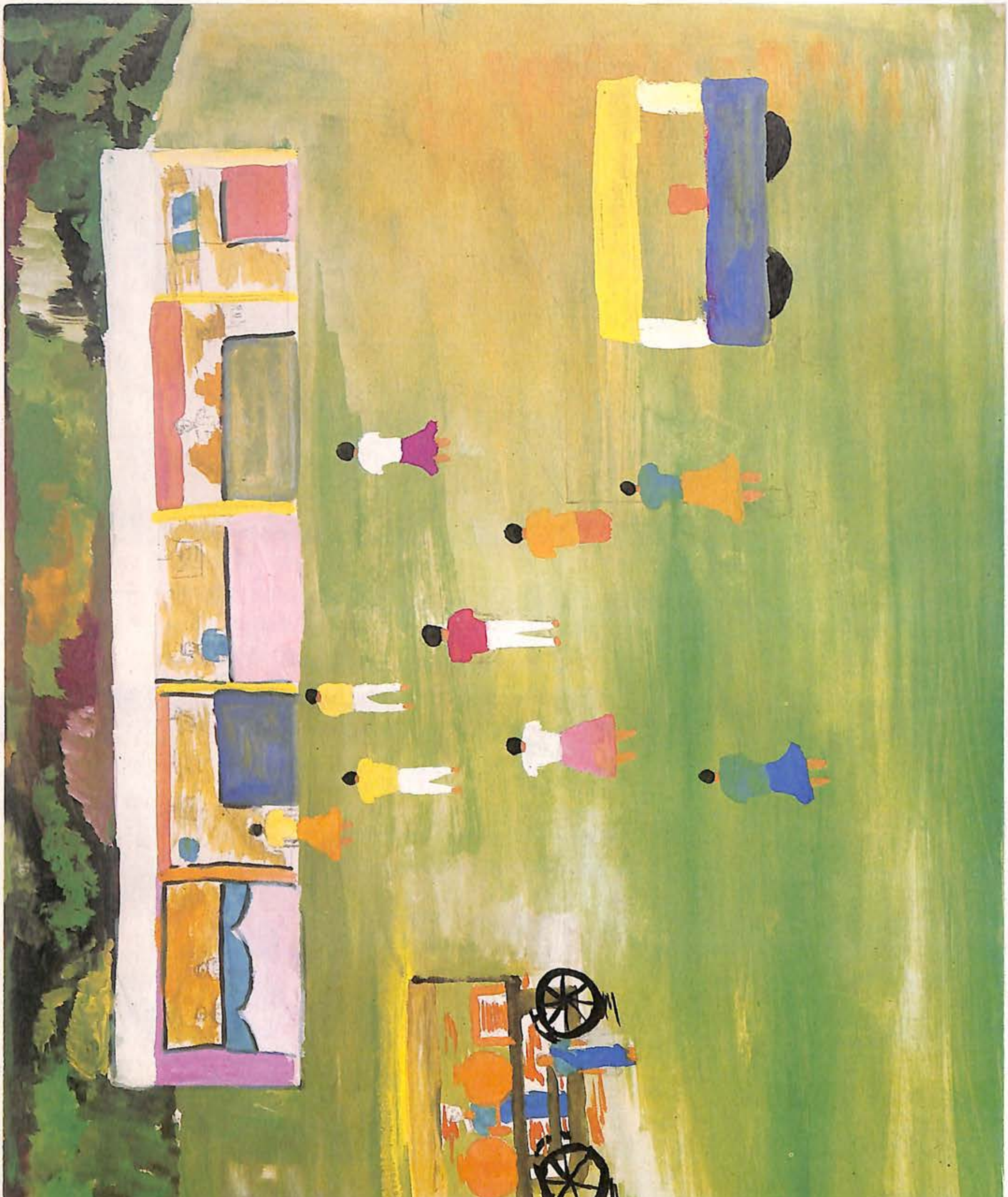


चित्र-12





पंजीयन क्रमांक 50309/85 के अंतर्गत भारत के समाचार पत्रों के रजिस्ट्रार द्वारा पंजीकृत । डाक पंजीयन क्रमांक BPL/DN/MP/431/91



प्रदीपसिंह परिहार, ग्यारहवीं, भोपाल

रेक्स डी रोजारियो की ओर से विनोद रायना द्वारा भंडारी ऑफसेट प्रिंटर्स, भोपाल से मुद्रित एवं एकलव्य, ई-1/208, अरेरा कॉलोनी, भोपाल-462 016 से प्रकाशित ।
संपादक : विनोद रायना ।